दूसरा अध्याय

जीवन परिवेश और सर्जनात्मकता

जीवन परिवेश और सर्जनात्मकता

2.1 लिखने की प्रेरणा

निर्मल वर्मा आधुनिक युग के बहुचर्चित सहित्यकार है। उनके साहित्य सृजन में परिवेश, पारिवारिक संस्कृति, वैयक्तित परिस्तितियाँ, अन्य साहित्यकार, अध्ययन मनन, प्रवासी जीवन, आदि प्रेरणा स्त्रोत रहे हैं।

2.1.1 पारिवार से प्रेरणा

निर्मल वर्मा का जन्म सन् 1929 में शिमला में एक औसत मध्यवर्गीय परिवार में हुआ। निर्मल वर्मा का जन्म जिस परिवार में हुआ वह संपूर्णतः लोकसेवी, मातृभूमि का अनन्य उपासक और साहित्यिक पुस्तकों के प्रति गहरा लगाव रखने वाला था। निर्मल वर्मा के घर-परिवार के संस्कार काफी देशी थे इसलिए बौद्धिकता, विवेक और वयस्कता के भीतर उनमें एक ठेठ देशी मानस सक्रिय था। पिता श्री लक्ष्मी प्रसादवर्मा सरकारी सेवा में काम करते थे। आठ भाई बहनों में निर्मल वर्मा सातवें थे।

निर्मल वर्मा के बडे भाई रघुवीर प्रसाद वर्मा व्रजभाषा के एक प्रौढ़ कवि थे। दूसरे भाई रामकुमार वर्मा ने कलाकार के रूप में प्रसिद्धि पाई है। बडी बहन पढ़ाई में बहुत तेज़ थी जिनका अधिक लाड-प्यार निर्मल वर्मा को

प्राप्त हुआ। उन्होंने पुस्तकों के बारे में, लेखकों के बारे में और बहुत सी चीज़ों के बारे में जानकारी दी, इससे उन में एक स्वतंत्र व्यक्तित्व उभर आया। माँ-बाप तीर्थयात्राओं पर उत्सुक थे। इनके साथ निर्मल वर्मा भी तीर्थयात्राओं पर, ऋषिकेश, बनारस में भाग लेते थे। लेकिन दादा, भाई और बहन साहित्य में रुचि रखनेवाले थे।

बचपन से ही निर्मल वर्मा को किताबों के प्रति अगाध लगाव था। उदयन वाजपेयी से हुए साक्षात्कार में निर्मल वर्मा स्वयं अपने परिवार से मिली प्रेरणा के बारे में ऐसा बताते हैं - "दादा स्वयं बहुत कम पढ़े लिखे थे। लेकिन किताबों के प्रति उनका अगाध स्नेह था, और इसके बाद जिन्होंने मुझे बहुत प्रेरित किया और जो अब जीवित नहीं है वे मेरी बडी बहन थीं। उन्होंने पहलीबार मुझे बहुत सी चीज़ों के बारे में बताया, पुस्तकों के बारे में, लेखकों के बारे में। वे आठवीं कक्षा में थीं और मैं तीसरी कक्षा में। वे बहुत मेधावी छात्रा थी। हर साल पुरस्कार में उन्हें जो पुस्तकें मिलती थी, उन पर सबसे पहले मैं कब्जा जमा लेता था। वे पत्रिकाएँ भी माँगवाती थीं - 'वीणा', 'सरस्वती', 'माधुरी'। उन सारी पत्रिकाओं की हमारे घर के लोग बहुत उत्सुकता से प्रतीक्षा किया करते थे।"[1]

सृजनशीलता से युक्त कुटुंम्ब में सभी लोग परस्पर स्वतंत्रता से अपना विचार प्रकट किया करते थे। उन्होंने संगीत, चित्रकला आदि पर विशेष रुचि हासिल की। फिल्मों के प्रति भी वे रुचि रखते थे। उन्हें दादाजी को रोज़ 'कल्याणी' पत्रिका पढकर सुनाना पड़ता था। 'वीणा', 'सरस्वती'और 'माधुरी'

भी बडी बहन की प्रेरणा से पढा करते थे। इसलिए बचपन में ही पुस्तकें पढने की आदत निर्मल वर्मा पर सुदृढ हुई। इस स्वभाव के बारे में निर्मल वर्मा की अपनी बात है - "मुझे अपने बाबा की बीमारी के अंतिम दिन याद आते हैं। वह भीतर के कमरे में माँ से अपनी व्यथा-गाथा कहते थे और मैं बाहर बरामदे में बैठे नेहरूजी की पुस्तक 'विश्व इतिहास की झलकें' पढा करता था।"[2]

निर्मल वर्मा की कई कहानियों में और उपन्यासों में भी माँ का पात्र बार-बार विभिन्न शक्ल-सूरत में दिखाई देता है। निर्मल वर्मा केलिए यह बात दुख की थी कि उनकी मृत्यु के समय वे लंदन में थे जिसे वह ज़िन्दगी भर भूल नहीं सके। निर्मल वर्मा ने अपनी माँ की मृत्यु के बाद अपने भाई राम कुमार को लिखे पत्र में माँ के अभाव को यों व्यक्त किया है - "अब मैं धीरे-धीरे उस अभाव का आदी हो चला हूँ जिसके बारे में कुछ दिन पहले तक सोचा भी न था। ...मुझे यहाँ इस जगह उनके न होने का दुख भी असहनीय लगता है क्योंकि मेरे लिये वह उस क्षण से नहीं थीं, जब से मैंने घर छोड़ा था और मैं सही मायनों में उनके न होने की भयानकता को केवल उस क्षण पहचान पाऊँगा, जब दुबारा घर लैटूँगा।"[3]

2.1.2 शैक्षणिक क्षेत्र - प्रेरणा स्त्रोत

शिमला का निर्मल वर्मा के जीवन में विशेष महत्व है। निर्मल वर्मा का प्रारंभिक स्कूली जीवन शिमला के हारकार्ट बटलर पहाडी स्कूल में संपन्न हुआ। किताबों, पत्रिकाओं, पर्वतांचल एवं बन्धुजनों ने साहित्य सृजन की नींव उन के मन में डाल दी। धीरे-धीरे निर्मल वर्मा का वैचारिक धरातल प्रभावशाली

हो गया। उन्होंने कई बातों, प्रश्नों, जिज्ञासाओं और चिंताओं के उत्तर देने चाहे। यहीं से उनके साहित्य जीवन की शुरूआत हुई। स्कूल के दिनों में उन्होंने कुछ कहानियाँ लिखी थीं, कुछ कहानियों से प्रेरित होकर उनकी नकल में। निर्मल वर्मा ने सेंट स्टीफेंस कॉलेज में पढते समय व्यवस्थित रूप से पहली कहानी लिखी।

बचपन में निर्मल वर्मा का अरमान जहाज़ का कप्तान बनने का था। समुद्र की लहरों ने उन्हें नहीं बुलाया क्योंकि नियति तो उन्हें लेखक बनाना चाहती थी। कन्हैयालाल नंदन से हुई बातचीत में वे बताते हैं— "बचपन में मैं नौसेना के किसी समुद्री जहाज का कप्तान बनने का स्वप्न देखता था। कुछ बडा होने पर मुझे अपनी सीमाएँ पता चलीं और मैं किसी सुदूर गाँव में स्कूली टीचर बनने की रोमांटिक आकांक्षा पालने लगा.... लेखक बनने का गौरवपूर्ण स्वप्न मैं ने कभी नहीं देखा, हालाँकि कहानियाँ पिछले कई वर्षों से लिखता आ रहा हूँ।"[4]

निर्मल वर्मा के बचपन का एक अधिकांश हिस्सा शिमला के पहाडों पर बीता। शिमला के पहाडों के प्रति उनके मन में लगाव उत्पन्न हुआ। शायद यही वजह है कि उनकी कहानियों में पहाड़ों का उल्लेख अक्सर दिखाई देता है। पहाड़ के दृश्य, पहाड की नदियाँ, पहाडी बच्चे और स्त्रियाँ आदि से वे नाभिनाल का संबंध था। पहाडों के संदर्भ में उनका यह वक्तव्य जो उन्होंने अपनी डयरी 'शिमला से आयोवतक' में दिया है - "अर्सों बाद मैं पहाडों को देखता हूँ, तो लगता है, वे मुझसे बात कर रहे हों - तुम फिर आ गए ? और

वे खडे रहते हैं, सफेद, निस्संग और खामोश, न मेरा मजाक उठाते हुए, न मुझ पर दया करते हुए..... सिर्फ मेरे लिए प्रार्थना करते हुए कि मैं लौट आया हूँ।"[5]

शिमला के स्कूली जीवन के बाद वे उच्च शिक्षा केलिए दिल्ली गये। दिल्ली सेंट स्टीफेंस कॉलेज से इतिहास में उन्होंने एम.ए. किया। इतिहास के प्रति निर्मल वर्मा के मन में बचपन से ही विशेष रूचि थी। फिर भी वे अंग्रेज़ी और हिन्दी साहित्य खूब पढते थे। निर्मल वर्मा दिल्ली के प्रतिष्ठित सेंट स्टीफन्स कॉलेज से निकले एकमात्र लेखक हैं जिन्होंने हिन्दी जैसी सादी भाषा को चुना। एक बातचीत में उन्होंने बताया -" हिन्दी उस वातावरण का अभिन्न अंग थी जिसमें मैं पला-बढ़ा, जिसमें मेरे विचार और भावनाओं का परिपाक हुआ। इस तरह मेरे भावनात्मक ढ़ाँचे की जड़ें मेरी मातृभाषा में थीं।"[6]

इतिहास को एक विषय के रूप में चुनने केलिए निर्मल वर्मा विशेष बुद्धि थी। सही बात यह है कि उनके मन में बचपन से ही इतिहास का थोडा-सा बीज उत्पन्न आया। निर्मल वर्मा ने कहा - "इतिहास में बहुत शौक था और एक बार जब मैं बहुत छोटा था, तो इच्छा हुई थी कि मैं दुनिया का इतिहास - जिसमें कि विभिन्न ढ़ंगों के लोगों के रीति-रिवाज़, उनके चाल-चलन, उनकी अलग-अलग संस्थाओं के बारे में ही लिखूँ।"[7] इतिहास के प्रति उन के मन में जागे इस नये बोध ने बाद में उनके चिन्तन और व्यक्तित्व को अधिक पुष्ट किया है।

2.1.3 किशोरावस्था की देन

निर्मल वर्मा की प्रखर बुद्धि और स्मरण शक्ति बचपन में ही दिखाई देने लगी थी। एकाग्रचित्त से गहराई में जाकर बड़ा या छोटा काम करना, खुला मुक्त मन, जीवन को भरपूर जीने की इच्छा, कष्ट सहने की अपार क्षमता, किसी की सहायता के बिना अपने पैरों पर खडे रहने की कोशिश, ये बातें अपने साहित्य और साहित्यिक जीवन में भी वे भूले नहीं। कला के रहस्यों को जानने का उल्लास, जो सुदूर बचपन में शुरू हुआ था, जीवन पर्यंत बना रहा।

किशोरावस्था ने निर्मल वर्मा पर व्यापक दुनिया की पनोरमा प्रस्तुत की है, जिसने यह मृदुभाषी निर्मल वर्मा को सृजन क्षेत्र के सरदार बनाने में अधिक महत्व निभाया है। निर्मल वर्मा छात्र जीवन से ही राजनीति में रुचि रखते रहे हैं। वे फिल्म, साहित्य, कला को समाजशास्त्रीय अभिव्यक्ति की राहें मानते हैं। बचपन से ही उन्हें चीज़ों को, स्थितियों को जानने-परखने की क्षमता थी। उनके ही शब्दों में - "मैं समझता हूँ कि मुझमें चीज़ों को, स्थितियों को जानने-समझने की एक गहन उत्सुकता है। वह उत्सुकता अपने भीतर होनी ही चाहिए - नैसर्गिक कई बातें होती हैं समझने-गुनने केलिए, लोगों को ही नहीं कई आवाज़ों को सुनना-गुनना होता है, पेड़ों को, प्रकृति को, आसपास इतना कुछ घट रहा होता है - न केवल मानव जगत में बल्कि मानवेतर विश्व में भी।"[8]

शिमला के भज्जी हाउस के बाद करोलबाग का घर था, जहाँ निर्मल वर्मा चालीस वर्षों तक रहे। छत पर बनी एक छोटी-सी बरसाती थी

जहाँ उनका लिखना-पढ़ना, सोना, मित्रों से मिलना-जुलना होता रहा था। शिमला में बिताये बचपन का कोई न कोई अंश निर्मल वर्मा की रचनाओं में मुखर रहा है। कई कहानियों और 'एक चिथडा सुख', 'रात का रिपोर्टर' जैसे उपन्यासों में हमें बरसाती और छत के चित्र दिखाई देते हैं।

निर्मल वर्मा को एक अग्रणी साहित्यकार बनने की प्रेरणा अपनी पारिवारिक वातावरण से ही उपलब्ध हुई हैं। विशेषतः अपने भाई प्रसिद्ध चित्रकार रामकुमार से। निर्मल वर्मा ने बताया - "राम के चित्रों ने मेरे लेखक को प्रभावित ही नहीं किया है लेकिन वह मेरी प्रेरणा स्रोत रहे हैं । वह इसका उदाहरण है कि भौतिक लाभ या कल की प्रत्याशा किये बिना कोई कैसे, रोज-रोज साल-दर-साल काम करता रह सकता है। मुझ जैसे आलसी लेखक को उनके सौन्दर्यबोध से नहीं उनके समर्पण से प्रेरणा मिली है।"[9]

स्कूल में पढ़ते समय से ही निर्मल वर्मा पुस्तकें पढ़ने के लिए लालायित थे। स्कूल की लाइब्रेरी से पुस्तकें लेने का दिन उनके लिए त्योहार का-सा दिन होता था। ये पुस्तकें उनके सृजन और रचना संसार रूपायित करने में प्रेरणा स्रोत रहीं। जो-जो पुस्तकें निर्मल वर्मा के आरम्भिक वर्षों के लेखन का प्रेरणा स्रोत्र बनीं, उनके संबंध में वे कहते हैं - "टॉलस्टॉय, चेखव, गोर्की- इनके बहुत अच्छे अनुवाद आये थे। शरत और रवीद्र के अनुवाद तो थे ही। तो ये पुस्तकें ही मेरे आरम्भिक वर्षों के लेखन का प्रेरणा स्रोत्र बनीं।"[10]

इससे हम कह सकते हैं कि निर्मल वर्मा का व्यक्तित्व, उनके जीवन के अनुभव कहीं न कहीं उनके सृजन, रचना-संसार से जुड़े होते हैं। दादाजी,

माँ-बाप, भाई-बहन, मित्रगण, शिमला के पहाड और प्रकृति-दृश्य तथा स्वदेशी और विदेशी रचनाकारों के साहित्य के प्रभाव ने किशोर निर्मल वर्मा पर मोटे तौर पर असर डाला है।

2.1.4 दाम्पत्य स्तर पर

निर्मल वर्मा के व्यक्तिगत जीवन की बहुत कम जानकारी पाठकों को है। अपने जीवन काल में अपने पारिवारिक सम्बन्धों के बारे में शायद ही कभी उन्होंने कुछ कहा हो। अपनी ज़िन्दगी की तरह अपने परिवार के बारे में भी निर्मल वर्मा नहीं के बराबर बोलते है। यही वजह है कि निर्मल वर्मा के लेखन पर जितना अधिक लिखा गया है उनकी व्यक्तिगत ज़िन्दगी पर उतना ही कम। निर्मल वर्मा की पहली पत्नी बकुल घोष थी। बकुल घोष निर्मल वर्मा के साथ चेक भाषा की कक्षा में थी और डॉक्टरी की पढ़ाई कर रही थी। 1964 में दोनों ने विवाह किया। 4 फरवरी 1967 में बेटी (पुतुल) का जन्म हुआ। 1970 में निर्मल वर्मा स्वदेश लौट आए।

शुरू में यहाँ की परिस्थितियों में अपनी गृहस्थी ज़माने का कार्य किया। समय के साथ-साथ स्पष्ट होता गया है कि निर्मल वर्मा के बौद्धिक जुडाव उन्हें भारत में बसने केलिए खींच रहे हैं। पहला विवाह टूटने का एक प्रमुख कारण यह था। इस दाम्पत्य के टूटने की अनुगूँज उनकी रचनाओं में जगह-जगह दिखायी देती है। अपने दाम्पत्य में निर्मल वर्मा मानते हैं कि अलगाव और उदासी, जीवन की खोज करनेवाले एक आदमी की नियति भी

होती है। निर्मल वर्मा का प्रथम विवाह तो असफल रहा। बाद में हिन्दी की प्रख्यात कवयित्री गगन गिल से दूसरा विवाह कर लिया।

निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि किसी भी लेखक के व्यक्तित्व के निर्माण में परिवार, परिवेश और शिक्षा आदि का महत्वपूर्ण स्थान होता है। कथाकार निर्मल वर्मा का पारिवारिक वातावरण साहित्यमय था। साहित्यिक दृष्टि से महत्वपूर्ण बहुत सारी बातें निर्मल वर्मा को परिवार से ही मिलीं। निर्मल वर्मा के व्यक्तित्व की महत्वपूर्ण बात थी ईमानदारी। उन्होंने हमेशा अपना काम पूरी ईमानदारी के साथ किया। निर्मल वर्मा न केवल एक अच्छे साहित्यकार रहे बल्कि उतने भी अच्छे व्यक्ति भी रहे।

2.2 रचनात्मक ऊर्जा के स्त्रोत

रचना दरअसल रचनाकार के अन्तर्मन की अभिव्यक्ति है। उसने जीवन में जो कुछ भोगा है, उस भोगे हुए यथार्थ का आत्मिक संप्रेषण ही रचना है। इसलिए रचना में रचनाकार का वैयक्तिक यथार्थ ही नहीं, अपने पारिवेशिक सच्चाई का भी अनावरण होना सहज एवं, स्वाभाविक है। किसी भी साहित्यकार के व्यक्तित्व को हम उसके सृजन में देख सकते हैं। साहित्य की सर्जना उसके व्यक्तित्व के साथ उसकी जीवन-परम्परा, वातावरण, प्रभाव एवं सामाजिक स्वरूप से भी स्पष्ट करती चलती है। कृति के माध्यम से साहित्यकार की अनुभूति, कला रचनात्मक ऊर्जों के स्त्रोत और अध्ययन-गांभीर्य का भी पता चलता है। निर्मल वर्मा की यही केन्द्रीय प्रज्ञा थी।

निर्मल वर्मा ने हिन्दी को एक नई कथा-भाषा, चिन्तन-भाषा से भी अलंकृत करने का वैचारिक प्रयास किया था। निर्मल वर्मा ने अपने जीवन और वातावरण को जोड़कर ही अपने कथाकार व्यक्तित्व की रचना की है। निर्मल वर्मा की शिक्षा अंग्रेज़ी माध्यम से हुई। जिस भाषा में उनका पालन-पोषण हुआ था उस भाषा में उन्होंने लिखना शुरु किया। घर-परिवार, आसपास में रिश्तेदारों की भाषा हिन्दी थी और उन के प्रभाव धर्म और उत्सव तथा भावनात्मक मन हिन्दु-संस्कारों से निर्मित हुआ। उन्होंने किसी संकल्प से लिखना शुरू नहीं किया।

2.2.1 भारतीय साहित्यकारों का प्रभाव

हिन्दी कहानी में काफी दिलचस्प परिवर्तन का समय था 1950-52। उन्हीं वर्षों में मोहन राकेश की कहानियाँ धीरे धीरे आना शुरू हो गई थीं, अमरकांत ने अपनी आरंभिक कहानियाँ उन्हीं वर्षों में लिखना शुरू किया था, कमलेश्वर की कुछ कहानियाँ सामने आई थीं। इन सबसे कहानी के शिल्प और उसकी कथात्मकता के माध्यम से भारतीय जीवन के बहुत से ऐसे आयामों के बारे में निर्मल वर्मा को जानकारी हासिल हुई। नई कविता आन्दोलन और दूसरे सप्तक के समय नरेश मेहता, मनोहरश्याम जोशी और रघुवीर सहाय आदि कवियों के साथ निर्मल वर्मा का संबंध रहा।

कालेज में पढते समय और बाद में भी निर्मल वर्मा समाजवाद के प्रति आकर्षित हुए थे। भारतीय समाजवाद में लोहिया और जयप्रकाश जी की किताबें निर्मल वर्मा ने पढीं थीं। समाजवाद के प्रति आकर्षण निर्मल वर्मा को

कम्युनिस्ट पार्टी के नजदीक ले गया। इसका कारण यह भी था कि कम्युनिज़्म के नाम पर चीन की क्रांति सफल हो चुकी थी। निर्मल वर्मा को सोवियत संघ से भी बडी आशाएँ थीं क्योंकि उसने जर्मन फासिज्म को हराया था।

निर्मल वर्मा जयप्रकाश नारायण के प्रति अगाध आस्था रखते थे। जयप्रकाश नारायण की तरह निर्मल वर्मा ने भी अपनी रचनाओं और चिंताओं में भारतीयता और निरंतर संकुचित होती जा रही आत्मा की बडी त्रासदी को देखा और इसे अपने समय की सबसे बड़ी समस्या के रूप में सफलता पूर्वक उठाया। विद्यार्थी जीवन में प्रेमचन्द, अज्ञेय, रवीन्द्रनाथ ठाकुर, शरतबाबू और जैनेद्र की कहानियों का गहरा असर निर्मल वर्मा पर पड़ा।

निर्मल वर्मा के व्यक्तित्व और लेखन में अज्ञेय से बहुत कुछ मिलता-जुलता सोच, वैयक्तिक स्वातंत्र्य और मितभाषी मुस्कुराता हुआ संवाद था। अनेक हिन्दी लेखकों की कृतियों से निर्मल वर्मा प्रभावित हुए, लेकिन उनका लेखन निर्मल वर्मा के लेखन से बहुत भिन्न है। उदाहरण के तौर पर रेणु, जिनका संसार, जिनका परिवेश, उपन्यास लिखने का ढंग बहुत भिन्न रहा है। इसके बावजूद निर्मल वर्मा उनके लेखन को उत्कृष्ट मानते थे। एक दूसरे ढंग से जैनेद्र व अज्ञेय के गद्य ने निर्मल वर्मा को बहुत प्रभावित किया है। अपने समकालीन लेखकों में निर्मल वर्मा को जाने पहचाने गद्य लेखकों के अलावा उन अनेक लेखकों की कृतियाँ बहुत पसंद आई हैं जो कथाकार के रूप में उपेक्षित रहे हैं, जैसे श्रीकांत वर्मा, रघुवीर सहाय या कुँवर नारायण की कहानियाँ।

कवि मलयज से वे बहुत प्रभावित थे। उनकी आधुनिकता निर्मल वर्मा का आदर्श थी। निर्मल वर्मा को महादेवी और रेणु का गद्य पसन्द था। वे कृष्णा सोबती के गद्य से, रामकुमार के गद्य से, विनोद कुमार शुक्ल के गद्य से प्रभावित थे। उदय प्रकाश, उदयन वाजपेयी, सत्येनकुमार, संजीव, मंजूर एहतेशाम, ध्रुव शुक्ल, स्वदेश दीपक आदि लेखकों को निर्मल वर्मा पसन्द करते थे। रामकृष्ण परमहंस के जीवन-चरित को पढते हुए या महात्मागाँधी की आत्मकथा या डॉ राम मनोहर लोहिया के लेखों को पढते हुए उतनी ही प्रेरणा निर्मल वर्मा को मिलती है जितनी विदेशी लेखकों को पढ़ते हुए।

विदेशों में जीवन का बहुमूल्य समय बिताने पर भी वे भारतीय संस्कृति के प्रति आस्थावान थे। कभी कभी लोग उन्हें पाश्चात्य भावों का चितेरा भी कहते थे। निर्मल वर्मा ऐसे लेखक हैं जिन्होंने नई कहानी के आन्दोलन से हटकर नया स्वर हिन्दी गद्य को दिया है । पश्चिम में उपन्यास की एक लंबी परंपरा रही है। इसके परिणामस्वरूप रूस या अमरीका या फ्रांस या जर्मनी के लेखकों के अनेक उपन्यास निर्मल वर्मा के जीने की यात्रा में जितने सहायक सिद्ध हुए हैं, उतने शायद भारतीय उपन्यास नहीं।

2.2.2 विदेशी साहित्यकारों का प्रभाव

यूरोपीय कवियों की कविताओं से निर्मल वर्मा का गहरा लगाव था और उसके समानांतर बंगाल या हिन्दी कविता में जो कुछ लिखा जाता था या अनुवाद में आता था वह हमेशा उनके लिए उतनी ही गहरी दिलचस्पी का विषय होता था जितना कि कोई गद्य साहित्य या कथा साहित्य । निर्मल वर्मा

अंग्रेज़ी में कविताएँ लिखते थे। यूरोपियन कवियों में रिल्के और एलियट की कविताओं ने निर्मल वर्मा को बहुत प्रभावित किया था।

अशोक वाजपेयी से हुई एक बातचीत में निर्मल वर्मा का कथन है - "मुझे रिल्के की कविताओं ने बहुत प्रभावित किया और केवल कविताएँ ही नहीं बल्कि उनके गद्य ने भी। ...एक समय था जब एलियट के 'फोर क्वाट्रट्स' मुझे उतनी ही शांति देते थे (और शायद आज भी देते हैं) जितनी शांति मुझे सुबह भगवद्गीता पढ़ते हुए मिलती है। इन कविताओं से मुझे बहुत गहरा स्थिर आलोक मिलता था। बाद में जब इन्हीं कवियों के संपर्क में आया तो मुझे सबसे अधिक बोरिस पास्तरनाक, अन्ना अख्मातोवा और बाद के वर्षों में मेरिना श्वेतायेवा की कविताएँ ज़्यादा पसंद आई। फ्रांस के सूर्रियलिस्ट कवि विशेष रूप से पॉल एलुआ की कविताएँ मुझे आकर्षित करती रहीं।"[11]

वयस्क होने पर निर्मल वर्मा को रूसी लेखकों ने एकदम अभिभूत कर दिया। निर्मल वर्मा कहते हैं - "जब कि मुझे रोमां रोला भी बहुत पसंद आते थे। उनका उपन्यास 'जां क्रिस्तेफ' पढा था। ये बहुत किशोरावस्था के प्रभाव थे जिनसे आज मैं मुक्त हो चुका हूँ, किन्तु जिन लेखकों का बहुत ही गहरा और स्थायी प्रभाव पड़ा था, वे थे चेखव, टॉलस्टॉय, विशेष कर टॉलस्टॉय और दोस्तोयवस्की। ...एम.ए. प्रीवियस की पढ़ाई के दिनों में मुझ पर वर्जीनिया वुल्फ का बहुत गहरा असर था।"[12] अमरिकी लेखक कैथरीन मैंसफील्ड ने भी निर्मल वर्मा को बहुत प्रभावित किया था।

निर्मल वर्मा ने एक दशक से अधिक समय यूरोप में बिताया जहाँ उन्होंने कारेल चापेक और मिलान कुदेरा जैसे आधुनिक चेक लेखकों के हिन्दी में अनुवाद की परियोजना का प्रारंभ किया। 1968 के प्रागवसंत के बाद वे प्राग से चले गए। उनके आलेख जो वहाँ की सामाजिक-सांस्कृतिक अवस्था के बारे में थे, नियमित रूप से टाइम्स ऑफ इंडिया के संपादकीय पृष्ठ पर स्थान पाते रहे। भारत की समकालीन चिंताधारा को उन्होंने अंग्रेज़ी के माध्यम से भी संसार तक पहुँचाया है। शेक्सपीयर, कुप्रिन आदि विश्वप्रसिद्ध रचनाकारों की कृतियों को निर्मल वर्मा ने हिन्दी में अनूदित कर भारतीय पाठकों तक पहुँचाया है।

आन्द्रोजीद (Andre Gide) के जर्नल, हाइनरिख ब्योल (Heinrich Boll) के उपन्यास, काफ्का (Franz Kafka) के नोट्स, विटगेंन्शटाइन लुडविंग (Ludwig wittgenstein) के पत्र, नादेज्दा मैइलश्टाम (Nadezhda Mandelstam) के आत्मलेख, स्टान्ढाल (Stendhal) की 'ब्रुलाई की ज़िन्दगी', रिल्के (Rainer Maria Rilke) के गध, होमर (Homer) की 'ओडेसी', काम्यू (Albert Camus) के 'रैबेल', तालस्तोय (Leo Tolstoy) के उपन्यास 'वार एण्ड पीस', ब्राड्स्की (Joseph Brodsky) के आलोचनात्मक गद्य, इलियट (T.S. Eliot) की लंबी कविता 'फोर कुआर्टेट्स', हेनरी मिलर (Henry Miller) के 'ट्रोपिक ऑफ कैन्सर', डॉरेथी डे (Dorothy Day) की आत्मकथा और सिमोन वेले (Simone Veil) के लेख- इन्हें पढते हुए निर्मल वर्मा अपने रचना समय, अपनी रचना प्रक्रिया, स्मृति-विस्मृति के द्वन्द्व पर विचार करते रहे।

फ्राँसिसी लेखक और चितंक सिमोन वॉयल की 'द नीड फॉर रूट्स'और 'वेटिंग ऑन गाड' निबंध संग्रह जो आधुनिक युग की आध्यात्मिक शून्यता का गहन विश्लेषण करते हैं ये निर्मल वर्मा को प्रेरणा के सतत स्रोत रहे हैं। काम्यू का लेखन, ऑर्वेल का पारदर्शी गद्य, वात्सलाव के चेक कारगृह से अपनी पत्नी ओलगा को लिखे गये पत्र (लेटर्स टु ओलगा) आदि ने निर्मल वर्मा को बहुत प्रभावित किया।

संक्षेप में कहा जा सकता है कि किसी भी लेखक की रचनाएँ, पाठक-लेखकों के विचारों एवं अनुभवों को उतना ही परिष्कृत करती हैं,जितना कि उसके अपने अनुभव एवं विचार। कहने का मतलब यह हुआ है कि रचनाकार का व्यक्तित्व अपने रचनात्मक व्यक्तित्व से अलग नहीं। रचनारत व्यक्ति में रचनाकार का सामाजिक व्यक्तित्व और पारिवारिक व्यक्तित्व घुलमिल जाता है। निर्मल वर्मा को यूरोपीय और भारतीय दोनों ही कलाकारों से गहरा आत्मबोध प्राप्त हुआ है।

2.3 भारतीय जीवन सन्दर्भ से जुडाव

निर्मल वर्मा का चिंतन समकालीन विश्व में एक विशिष्ट व्यक्ति का और साथ ही एक भारतीय व्यक्ति का चिंतन है। उनमें भारतीय चिंतन परंपरा और पश्चिमवाद का द्वन्द्व एक नयी रचनात्मक सोच की निष्पत्ति करता है। भारतीय संस्कृति और सौन्दर्य भावना को उकेरने तथा सहेजने में जो सफलता निर्मल वर्मा को मिली है, वह अन्य समकालीन कथा-चिन्तकों में नहीं दिखती। निर्मल वर्मा की भारतीयता की चिन्ता व अवधारणा बौद्धिक सम्प्रदाय में एक

नवोन्मेष की भी द्योतक है। निर्मल वर्मा के चिंतन और विचारधारा में रामायण, महाभारत और भारतीय सभ्यता का गहरा प्रभाव पड़ा है। उनका रचना संसार भारतीय सभ्यता और संस्कृति का खुला पन्ना है। दरअसल निर्मल वर्मा केलिए भारतीय सभ्यता महत्वपूर्ण विषय है।

विदेशों में जीवन का बहुमूल्य समय बिताने के बावजूद वे भारतीय संस्कृति के प्रति आस्थावान थे। कभी-कभी लोग उन्हें पाश्चात्य भावों के चितेरे भी कहते थे, वे संस्कृति को बचाने एंव सुरक्षित करने के लिए सदा सावधान एव सतर्क रहते थे। बहुतों ने उनके भारतीय साहस को देखकर बाबावादी, अध्यात्मवादी, हिन्दुत्ववादी, पुनरूत्थानवादी, व्याकुल और अजब-गजब का प्रतिक्रियावादी तक कह दिया।

2.3.1 भारतीयता की परिभाषा

भारतीयता संबंधी निर्मल वर्मा का मनन स्वाभाविक ही मुख्यतः उनकी निबन्ध-पुस्तकों में उभरा है। इन निबन्धों में उन्होंने 'भारतीय आत्मा' की दुहरी प्रकृति को कुरेदने की कोशिश की है। निर्मल वर्मा भारतीयता में मात्र विविधता देखकर, समावेशीपन देखकर या एक विराट सामूहिकता देखकर अपनी दृष्टि सीमित नहीं करते थे, बल्कि भारतीयता में एक ऐसा समूचा विश्व देखते थे जिसके तमाम पहिए भारतीयता की धुरी पर घूमते हैं। निर्मल वर्मा ने भारतीय संस्कृति को वैश्विक स्तर पर पश्चिम के प्रतिरोध में समझा।

निर्मल वर्मा भारतीय संस्कृति को ही विश्व की सर्वश्रेष्ठ संस्कृति मानने और बनाने पर तुले हुए दिखाई देते हैं। एक मात्र यही संस्कृति विश्व को समग्रता के सूत्र में पिरोए रख सकती है। उनका मानना है कि - "आज की दुनिया में भारतीय समाज ही एक अकेला समाज है जिसकी परम्परा के समस्त तत्त्व आज भी मौजूद हैं, लोगों को उपलब्ध हैं और न केवल उपलब्ध हैं, बल्कि जीवन से लेकर मृत्यु तक किसी न किसी रूप में हर भारतीय अपने दैनिक व्यवहार में इन तत्त्वों द्वारा अनुप्राणित होता है।"[13]

निर्मल वर्मा की दृष्टि में भारतीय सभ्यता की सबसे बडी विशेषता उसका आत्मबोध है। आपका समर्थन है कि भारतीय संस्कृति व सभ्यता को समझना अपने आपको समझना है, अपने आपको पहचानना है, अपनी खोजबीन करना है, अपनी आत्मा का अन्वेषण करना है, अपने भीतर कुरेदना है। इस संदर्भ में वे कहते हैं –"एक तरह से यह खुद अपनी आत्मा की जॉच-पडताल करने की कोशिश है। मैं बरसों से अपने देश के बाहर रहा हूँ। इससे मेरे भीतर एक अलगाव-सा उत्पन्न हुआ है, जो मुझे कभी-कभी बोझ-सा जान पड़ता है। पश्चिम से मुझे एक तार्किक अन्तर्दृष्टि मिली है, जिसके सहारे मैंने अपनी संस्कृति के मिथक-बोध, बिम्बों और प्रतीकों की गैर-तार्किक अन्तर चेतना को परखने की चेष्टा की है।"[14]

निर्मल वर्मा को एक भारतीय होने का बडा गर्व था। निर्मल वर्मा की कई कहानियों और रचनाओं में उनका देश प्रेम बहुत स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है। उनका 'मेरे लिए भारतीय होने का अर्थ' शीर्षक निबंध में बचपन

में घटित देश प्रेम के क्षण को याद करते हुए वे कहते हैं - "यह मेरे लिए अपने देश भारत की पहली छवी थी, जो मेरी स्मृति में टँगी रह गई है.... वह शाम, वह पुल, पुल के परे रेत के ढूह और वह डूबता सूरज और एक अनाम नदी... मुझे लगता है अपने देश के साथ मेरा प्रेम-प्रसंग यहीं से शुरू हुआ था।"[15]

देश और देश प्रेम की यह अनुभूति एवं अवधारणा उनके इस कथन से भी जाहिर होता है – "एक लेखक होने के नाते मुझे कभी-कभी अपने देश के प्रति गहरी झुंझलाहट और कटुता महसूस होती है, लेकिन सौगंन्ध खाकर कहता हूँ कि किसी भी कीमत पर अपना देश किसी और देश से नहीं बदलना चाहूँगा। न ही अपने देश के इतिहास को किसी दूसरे इतिहास मे परिणत करना चाहूँगा, जो ईश्वर ने मेरे पूर्वजों के हाथो में दिया था।"[16]

निर्मल वर्मा स्पष्ट कर देना चाहते हैं कि हमारे परंपरागत सभ्यता-बोध के धर्म मर्यादित ढांचे में राष्ट्र, जाति और राज्य की अवधारणा बिलकुल भिन्न थी। भारतीय चिंतन सम्पूर्णता का चिंतन है इसमें धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष का समवेत स्वर है, न भौतिकता का नकार है न आध्यात्मिकता का। भारतीय संस्कृति का विशिष्ट पहलू यह है कि उसकी संस्कृति धर्म पर आधारित है तथा धर्म अपने मिथक, प्रतीक, संस्कार, अनुष्ठान और कर्मकाण्ड पर। उनके अनुसार - "हमारी समाज व्यवस्था शताब्दियों से अपनी जीवन्त प्रेरणा विभिन्न बहुमुखी स्त्रोतों से प्राप्त करती रही है, उस पर एक किस्म का यूनीफार्म ढाँचा लादने का मतलब उन स्त्रोतों को ही नष्ट कर देना, जिनसे हमारी जीवन-धारा अपनी अस्मिता का जलग्रहण करती रही है।"[17]

निर्मल वर्मा भारतीयता से भारत के विश्वासों को लेकर ही निबटना चाहते हैं। उनका विश्वास है कि इन विश्वासों, इन मिथकों की डोर उस ज़मीन से जुड़ी होती है जहाँ मनुष्य रहता है। इसका कारण वे बताते हैं- "एक देश की पहचान सिर्फ उन लोगों से नहीं बनती, जो एक समय में जीवित थे और आज उसकी मिट्टी के नीचे दबे हैं। समय बीतने के साथ भूमि की भौगोलिक सीमाएँ धीरे-धीरे संस्कृति के नक्शे में बदल जाती हैं । एक के खंडित होते ही दूसरे की गरिमा को भी चोट पहूँचाती है।"[18]

निर्मल वर्मा के चितंन में एक मुख्य बात जो साफ तौर पर नज़र आती है वह है 'भारतीय संस्कृति' की वकालत। भारतीयता, भारतीय परंपरा का विशलेषण करते समय उन्होंने किसी तत्ववादी ढाँचे को खड़ा नहीं किया है। उनके अनुसार - "संस्कृति को उन बिंबों, प्रतीकों और मिथकों से अलग करके नहीं देख सकते, जो हमारे जीवन के साथ अंतरंग रूप से जुड़े हैं। इनके माध्यम से न केवल हम अपने को पहचानते हैं, बल्कि ये वह आईना है जिनके द्वारा हम बाहर की दुनिया को परखते हैं। ये बिंब और मिथक एक अदृश्य कसौटी हैं, जिनसे हम धर्म और अधर्म, नैतिकता और अनैतिकता के बीच भेद करते हैं।"[19] अतः हम कह सकते हैं निर्मल वर्मा का समूचा चिंतन भारतीय संस्कृति और परम्परा और व्याख्या को समर्पित है।

2.3.2 भारतीय संस्कृति और पश्चिमी संस्कृति संबंधी दृष्टिकोण

निर्मल वर्मा भारतीय संस्कृति की अवघारणा को पश्चिमी संस्कृति की अवघारणा से अलग मानते हैं। उनका मानना है कि एक भारतीय का

अपनी संस्कृति के साथ सहज संबंध अंग्रेजों के यहाँ आने से नष्ट हो गया। निर्मल वर्मा का यहाँ तक सोचना है कि - " भारत के अंग्रेज़ी राज्य का सबसे अधिक दुखदायी गुलाम प्रभाव यह नहीं था कि हम आर्थिक और राजनीतिक रूप से गुलाम हुए, बल्कि यह कि इतिहास ने हमारी चेतना को पहली बार अतीत, वर्तमान और भविष्य जैसे कठघरों में परिभाषित किया, वर्तमान से उन्मूलित किया।"[20]

निर्मल वर्मा ने अपने प्रत्यक्ष अनुभवों के आधार पर भारतीय और पश्चिमी संस्कृतियों के अन्तर को गहनता एवं व्यापकता से उद्घाटित किया है। यूरोपीय संस्कृति की विशेषताओं के संबंध में निर्मल वर्मा लिखते हैं–" यूरोप में संस्कृति का अहसास ही एक आत्म-सहज, विकसित आत्म-चेतना से जुड़ा है - एक ऐसे समाज में ही 'संस्कृति' का बोध होता है, जहाँ मनुष्य का धार्मिक अनुभव उसके सेक्यूलर अनुभव से स्पष्ट रेखा द्वारा विभाजित हो। किंतु 'भारतीय संदर्भ' में इस तरह का कोई विभाजन न था, धर्म की धारा में संस्कृति का उतना ही समावेश था, जितना आध्यात्म का।"[21] अतः यूरोप में वैयक्तिक चेतना और धार्मिक विश्वासों के बीच एक चौड़ी खाई खुलती गई, अपनी चेतना में मनुष्य अकेला और निस्सहाय पड़ता गया।

पश्चिमी सभ्यता का बीहड आघात भारतीय सभ्यता को झेलना पडा है। बुनियादी तौर पर पश्चिमी सभ्यता और भारतीय सभ्यता में अन्तर है। भारतीय संस्कृति में मनुष्य और प्रकृति का साहचर्यगत रागात्मक संबंध रहा है। निर्मल वर्मा भारतीय संस्कृति को अन्य संस्कृतियों की तुलना में श्रेष्ठ मानते

हैं। उनका कहना है - " दुनिया की अन्य सभ्यताओं की तुलना में भारतीय संस्कृति का यह एक विशेष संस्कार रहा है कि उसने कभी मनुष्य को प्रकृति से ऊपर नहीं माना बल्कि प्रकृति और मनुष्य के बीच एक ऐसे पवित्र और संतुलित संबंध की कल्पना की है। यहाँ दोनों एक दूसरे के प्रतिद्वंद्वी नहीं पोषक हैं।" [22] निर्मल वर्मा प्रकृति से मनुष्य के अलग होने की इस घटना को मनुष्य का पहला पतन और मनुष्य के व्यक्ति बन जाने को दूसरा पतन मानते हैं।

अंग्रेज़ी शिक्षा ने भारतीय बुद्धिजीवी के लिए जिस परिवेश का सृजन किया, उस परिवेश ने भारत की जातीय संस्कृति के उस चरित्र को नुकसान पहूँचाया जो अलग-अलग स्त्रोतों से एक समग्रता बोध अर्जित करता था। समग्रता का यह बोध खंडित हुआ और व्यक्तिगत तथा जातिगत अस्मिताओं का उदय हुआ। इसका समर्थन करते हुए निर्मल वर्मा कहते हैं - "आधुनिकता की बलिवेदी पर अपने सम्पूर्णत्व को चढ़ाकर ही वह एक स्वतंत्र व्यक्ति बनने का वरदान पा सकता था। यह एक तरह से चेतना का चढ़ावा बुद्धि की वेदी पर था।"[23]

निर्मल वर्मा का मानना है कि पुरातन भारतीय संस्कृति के जो तत्व अभी पश्चिमी हस्तक्षेप के बावजूद बचे हैं, उन्हें ही संयोजित करके वर्तमान संकट का एक मानवीय और मौलिक विकल्प प्रस्तुत किया जा सकता है। निर्मल वर्मा के शब्दों में - "पश्चिमी सभ्यता की मान्यताओं से जो व्यापक मोहभंग हुआ उसके कारण युवा पीढ़ी के लेखक और विचारक ही नहीं, बल्कि सामान्य लोग भारत के प्रति आकर्षित हुए। अपनी सभ्यता की भौतिकवादी

मान्यताओं से विक्षुब्ध होकर उन्होंने भारतीय दर्शन और आध्यात्मवाद में शरण खोजनी चाही।"[24] पश्चिमी आधुनिकता के ज़ोरदार आक्रमण ने भारतीय परंपरा में जो दरार डाली है, निर्मल वर्मा उसके प्रति सावधान रहने वाले चिन्तक हैं।

2.3.3 औद्योगीकरण का दुष्प्रभाव

औद्योगीकरण ने भारत के विकास के नाम पर भारतीय संस्कृति का विनाश किया। अपने ही देश में करोडों लोग विस्थापन के शिकार हुए, जहाँ से कोई वापसी नहीं है। इस सन्दर्भ में निर्मल वर्मा, महात्मा गाँधी द्वारा सुझाये मार्ग को भारत के लिए उपयुक्त पाते हैं। निर्मल वर्मा का ज़ोर अपनी जातीय संस्कृति की विशेषताओं को बनाये रखते हुए विकास का मार्ग सुनिश्चित करना है। इसलिए निर्मल वर्मा उस पूरी प्रक्रिया को सामने लाते हैं जिसके द्वारा अंग्रेज़ों ने भारतीय संस्कृति, परंपरा, इतिहास, स्मृति, आकांक्षा, स्वप्न, यथार्थ और भाषा आदि को हस्तगत करने का प्रयास किया था।

अतः यह स्पष्ट है कि निर्मल वर्मा भारतीयता से भारतीय संस्कृति को बचाना चाहते हैं, इसलिए वे भारतीय आध्यात्म की ओर बार बार लौटते हैं। एक चिंतक और रचनाकार की भूमिका में निर्मल वर्मा ने भारतीय होने का अर्थ गहराई से समझा था। निर्मल वर्मा भारतीयों को भारतीय चिंतन प्रणाली से दुबारा जोड़ना चाहते हैं; जिसमें आदर्श का स्वप्न जागृत है। उनका भारतीयता संबन्धी विचार और चिंतन मनुष्य को संपूर्ण मनुष्य बनाने और इस देश की खोई आत्मा के पुनर्वास का भगीरथ उद्यम है।

2.4 प्रवासी जीवन और रचनात्मकता

एक सम्मानित साहित्यकार को सक्षम तथा अमूल्य अनुभवी बनाने में प्रवासी जीवन का महत्वपूर्ण स्थान है। प्रवासी रहन-सहन से अनुभूति एवं चिंतन शक्ति विस्तृत हो जाती है। विभिन्न भाषाओं से, संस्कृतियों से, आचार-विचार से, रहन-सहन से, व्यवहार विशेष से तथा प्राकृतिक दृश्यों से संपन्न यह प्रवासी जीवनचक्र एक साहित्यकार को धनी बनाता है। निर्मल वर्मा के लेखन में प्रवासी मानसिकता की आलोचना है, जो उनकी कहानियों को खास तौर पर प्रासंगिक बनाती है। सन् 1967-68 के बाद निर्मल वर्मा की रचनाशीलता, संवेदनशीलता और विचारधारा में बहुत निर्णायक मोड़ आया । मुख्यतः इसका कारण उनका यूरोप प्रवास है।

निर्मल वर्मा को 1959 से 1972 तक यूरोप में प्रवास करने का अवसर मिला था और उन्होंने लगभग समूचे यूरोप की यात्रा करके वहाँ की अलग-अलग संस्कृतियों को नज़दीक से देखने और समझने का अवसर प्राप्त किया था। उनका यूरोप जाना बहुत तैयारी से नहीं हुआ था। अपने बडे भाई और प्रसिद्ध चित्रकार रामकुमार के माध्यम से निर्मल वर्मा को ओरिएण्टल इंस्टीट्यूट के एक प्रसिद्ध विद्वान डॉ. मीरोस्लाव कासा ने चेक से हिन्दी में अनुवाद करने के लिए निमन्त्रित किया। निर्मल वर्मा उन दिनों राज्य सभा के अनुवादक के पद से त्यागपत्र देकर एक विदेशी शब्दकोश पर काम कर रहे थे। यह प्रस्ताव मिलने पर वे शब्दकोश निर्माण कार्य बीच में छोड़कर प्रसन्न भाव से जाने को तैयार हो गये।

प्रवास काल में निर्मल वर्मा को अनेक पाश्चात्य लेखकों की कृतियों को करीब से देखने का अवसर मिला। फ्रांसिसी लेखिका और चिंतक सिमोन वॉयल, काम्यू, ऑर्वेल, वात्सलाव हावेल, लियो टॉलस्टाय, दॉस्तोयवस्की, तुर्गनेव, चेखेव, प्रूस्त, हेमिंग्वे, फॉकनर स्टाइनवेक, कारेल चापेक, जोसफ श्क्वोरस्की, इर्शोफ्रीड, मिहाइल सादौवेनू, यान ओत्वेनारोक, अलेकसांद्र कुप्रीन, अलेक्लाद्र फेयदेव, विल्लियम शेक्सिपियर, चार्ल्स डिकेन्स, विल्लयम् वेर्टस्वर्त, ऐलियट, यीट्स, रिल्के आदि अनेक पाश्चात्य लेखकों के प्रभाव निर्मल वर्मा को रचनात्मक आयाम देने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते थे।

पाश्चात्य लेखकों के प्रभाव के संबंध में निर्मल वर्मा करण थापर से हुई बातचीत में कहते हैं - "मुझे लगता है कि चेकोस्लोवाकिया मेरे लिए एक खिड़की, एक अलग अनुभव, एक अलग संसार में पहुँचाने वाली दहलीज रहा। यूरोप के बारे में मैंने सिर्फ टॉमस मान और रूसी लेखकों के उपन्यासों में पढ़ा था। ... यूरोप आना फिर से उस जीवन को जीना था, जिसे मैं पुस्तकों और उपन्यासों में जीता रहा था।"[25] यूरोप प्रवास से उनकी जीवन दृष्टि बदली और इसका प्रभाव उनकी परवर्ती रचनाओं पर पड़ा।

2.4.1 चेक प्रवास में सृजन कार्य

निर्मल वर्मा 1959 से प्राग के प्राच्य विद्या संस्थान में सात वर्ष तक रहे। उनकी उन दिनों बहुत से चेक लेखकों से मुलाकात हुई। उन दिनों चेकोस्लोवाकिया में यूरोपीय या अमरिकी लेखकों पर सेंसरशिप, पुस्तकों पर पाबंदियाँ और हर तरह का दमन अपनी चरम सीमा पर था। एक हिन्दुस्तानी

होने के नाते सेंसरशिप की कड़ी दृष्टि निर्मल वर्मा पर नहीं थी। 1961-62 के दौरान निर्मल वर्मा ने चेक भाषा का अध्ययन समाप्त किया और प्राग की चालर्स यूनिवर्सिटी में चेक साहित्य के लेकचर्स में शामिल हुए। लेकिन इसी बीच सेंसरशिप के कारण समकालीन चेक लेखकों की रचनाएँ न छपने देता था। किन्तु इस अन्धकार में भी रचनाकार चुप नहीं थे - वे कहानियाँ, उपन्यास, कविताएँ लिखते थे और मित्रों के बीच 'सर्कुलेट' करते थे।

निर्मल वर्मा इस काल के सभी रचनाकारों से आत्मीय संबंध रखते थे। सन् 1965 तक आते आते कठोर अनुशासन थोड़ा ढीला पडा। इन दिनों मिलान कुंदेरा का 'जोक', शकवरोस्की का 'कवाड्र्स' और वास्लाव हावेल का नाटक 'दि गार्डन पार्टो' छपकर आया। 'दि गार्डन पार्टो' का मंचन हुआ तो उसे पूरे मन से देखा। निर्मल वर्मा ने वहाँ के रचनाकारों तथा चिंतकों से मिलने पर महसूस किया कि हर देश का साहित्य अपनी अलग पहचान, अलग सांस्कृतिक मुहावरा रखता है चाहे बड़ा देश हो या छोटा।

प्राग के दिनों में वहाँ की भाषा तथा संस्कार से निर्मल बिलकुल अपरिचित थे, और उनका प्राग में कोई दोस्त नहीं था। इसीलिए जब कभी वे अकेलापन महसूस करते थे, वे पोस्टर में मोत्सार्ट, बात्व या बीथोवन के नाम देखकर श्याम को कंसर्ट में जा बैठते थे। पश्चिमी शास्त्रीय संगीत में उनकी दिलचस्पी बढने का यह एक कारण रहा। उनके ही शब्दों में - "मेरा ख्याल है कि मेरी सबसे ज़्यादा शिक्षा-दीक्षा पश्चिमी शास्त्रीय संगीत में हुई है जो प्राग की उन शामों में हुई है जब मैं कोई भी शाम शायद ही बिना किसी कंसर्ट जाये बिताता था।"[26]

चेक प्रवास का व्यापक प्रभाव प्रमुख रूप से निर्मल वर्मा के निबन्धों पर दिखाई पडता है। निर्मल वर्मा के सृजन-चिन्तन की मानसिकता को समझने की दृष्टि से उनका यह कथन उनके अनुभव की गीता है कि - "मेरे चेक प्रवास का अनुभव मेरी कहानियों और उपन्यासों पर उतना नहीं जितना मेरे निबन्धों पर पडा था, जो मैंने अपने देश लौटकर लिखे थे। पश्चिमी सभ्यता, विशेषकर समाजवाद के बारे में मेरी विचार-दृष्टि में एक तरह का रैडिकल परिवर्तन आया, जिसने मेरे बहुत से भ्रमों और सम्मोहनों को तोड दिया।"[27] इन विचारों का पूरा विस्तार 'भारत और यूरोप', 'प्रतिश्रुति के क्षेत्र', 'आदि अन्त और आरंभ' तथा 'दूसरे शब्दों में' जैसे निबन्ध संग्रहों के तर्कपुष्ट चिन्तन से हुआ।

निर्मल वर्मा का प्राग प्रवासी जीवन का अनुभव अपने आप में अनूठा था। निर्मल वर्मा ने विदेश संदर्भ से अपने बारे में टिप्पणी की है कि- "हम भारतीय अकसर अपने पारिवारिक संबंधों के भीतर इतना धसकर रहते हैं कि अपने को तटस्थ भाव से देखने का अवकाश हमें मिल ही नहीं पाता। मुझे नहीं लगता है कि मैं स्वयं अपने देश और अपने समाज के काले और उजले पक्षों को इतने निसंग भाव से देख पाता अगर मुझे विदेश जाने का अवसर न मिलता।"[28] प्रवासी हिन्दी साहित्य में निर्मल वर्मा सबसे सशक्त हस्ताक्षर हैं। अपने जीवन के लम्बे समय विदेशों में भ्रमण करते हुए निर्मल वर्मा भी सृजन जगत में व्यापक अनुभवी बन गये।

2.4.2 यूरोप प्रवास में सृजन धर्मिता

निर्मल वर्मा सैर करना अत्यंत पसंद करते थे। कुछ विदेशी संस्थाओं से आमंत्रित होकर निर्मल वर्मा ने चेकोस्लोवाकिया, यूरोप, अमरिका, रूस आदि अनेक देशों में पर्यटन किये। विख्यात साहित्यकार विनोद भारद्वाज से हुई बातचीत में निर्मल वर्मा ने लंदन प्रवास के संबंध में बताया - "मैं लंदन में कई वर्ष रहा हूँ और वे मेरे जीवन के सुखद वर्ष रहे हैं। मैं समझता हूँ कि मैं उस शहर में आधाभूखा भी रह सकता हूँ। वहाँ पर वह भूख भी अपने में काफी रचनात्मक हो सकती है। शहरी जीवन का अकेलापन और उसका भरपूरपन अगर कहीं मैंने एकसाथ पाया है, तो वह लंदन में। कभी कभी मुझै हैरानी होती थी कि मैं सुबह से शाम तक एक आधे दर्जन शब्दों को बोलकर भी रह सकता हूँ ।"[29]

निर्मल वर्मा जिस समय यूरोप की यात्रा पर थे, उस समय यूरोप द्वितीय विश्व युद्ध के भीषण अनुभवों से गुज़र चुका था और महायुद्ध की तबाही के अवशेष यूरोप के वातावरण तथा उसकी चेतना में वर्तमान थे। एक ओर विगत युद्ध के त्रासद परिणामों की पीडा निर्मल वर्मा महसूस करते हैं तो दूसरी ओर वहाँ के वर्तमान सामाजिक राजनैतिक जीवन के तनावों का भी आभास उन्हें हुआ है। युद्ध के बाद दो गुटों में बंट गये विश्व के आपसी तनाव, शीत युद्ध का सन्देहास्पद वातावरण और सामाजिक-सांस्कृतिक स्तर पर कटे हुए यूरोप का उनको एहसास हुआ। विचारधाराओं से परिचालित राजनीति और व्यवस्था ने किस प्रकार मानव चेतना को भी विभाजित कर दिया है इसका

अनुभव उन्हें यात्रा में अनेक बार हुआ है। वे कहते हैं - "शीत युद्ध की यह नयी बीमारी, यह छुआछूत यूरोप की दैनिक चर्या का एक अभिन्नतम अंग बन गई है। इसका भयानक अनुभव मुझे लन्दन में भी हुआ।"[30]

यूरोप के तनाव-खिंचाव का ही नहीं उसके उल्लास की पाश्चात्य उन्मुक्त जीनव-शैली के बंधुत्व की भावना का तथा शांति के प्रयासों की आहट का उल्लेख भी उनके यूरोप प्रवास में वर्तमान है। बर्लिन ऐन्सम्बल में ब्रेख्त का नाटक भी उनको देखने का अवसर मिला है। मूर्तिकार 'आस्मुन्दुर स्वेन साँन' से वे मिले हैं। संगीतकार 'मोत्सार्ट' के घर जाने का अवसर भी उन्हें मिला है। चित्रकला में निर्मल वर्मा की विशेष अभिरुचि रही है। उन्होंने यूरोप के प्रमुख चित्रकारों - रेम्ब्रा वर्मीर, तितियान, पूँसा आदि की कलागत विशेषताओं का सूक्ष्म विश्लेषण किया है।

ब्रेख्त, वेकेट, मान, काफ्का, लेक्सनान, दाँस्ताँयवस्की पर चर्चा के साथ-साथ आइसलैण्ड के प्राचीनतम साहित्य-सागा ग्रंथों के स्वरूप तथा महत्व का प्रतिपादन भी निर्मल वर्मा ने अपने यात्रा वृत्तातों में किया है। यूरोप के लोगों के धार्मिक विश्वासों और मान्यताओं को, नैतिकता के मानदण्डों को और दार्शनिक विचारधाराओं को भी निर्मल वर्मा ने गहराई से समझने का प्रयास किया है।

2.4.3 प्रवासी यात्रा के दौरान यात्रा वृत्तांत

निर्मल वर्मा के इस लम्बे प्रवास की यात्राओं के अनुभव उनकी रचना 'चीड़ों पर चाँदनी में' संकलित है। 'चीडों पर चाँदनी' रचना मुख्यतः तीन

खण्डों में विभाजित है। प्रथम खण्ड 'उत्तरी रोशनियों की ओर' चेकोस्लोवाकिया की राजधानी प्राग से आइसलैण्ड तक की यात्रा के विविध पडावों के अनुभवों को रूपायित करता है। दूसरा खण्ड- 'चीडों पर चाँदनी में' भी मुख्यतः यूरोप के विभिन्न नगरों यथा वियना, पेरिस, प्राग और लीदीत्से की यात्राओं से संबद्ध है। तीसरा खण्ड - 'देहरी के बाहर' में संकलित है। इसमें विशिष्ट अनुभवों, कुछ विशेष स्थलों या व्यक्तियों की स्मृतियों का पुनरावलोकन अधिक है।

निर्मल वर्मा की रचना का उद्देश्य यूरोप की तथ्यात्मक जानकारी देना नहीं है वरन् अपनी यात्रा की उन स्मृतियों को पुनसृजित करना है जिन्हें उन्होंने चमत्कार की सज्ञा दी है। कुछ ऐसे अनुभवों की स्मृतियाँ जिनके विषय में निर्मल वर्मा का कहना है - "कुछ वैसा ही रीता अनुभव जब हम किसी जिन्दा फड़फडाते पक्षी को क्षण भर पकड कर छोड़ देते हैं - उसकी देह हमसे अलग हो जाती है लेकिन देर तक हथेलियों पर उसकी धडकन महसूस होती रहती है।"[31]

निर्मल वर्मा अपने यात्रावृत्तातों में भिन्न भिन्न देशों की यात्राओं के दौरान एक दूसरे की संस्कृति को निकट से खामोशी के साथ समझने की कोशिश करते दिखाई देते हैं। वह खुद भी मानते हैं कि यूरोप प्रवास के ये वर्ष उनके जीवन के सबसे महत्वपूर्ण वर्ष रहे। अपनी यात्रा में निर्मल वर्मा यूरोप के अनेक देशों तथा शहरों से गुज़रे हैं और हर शहर का चेहरा पहचानने, उसकी विशिष्ट पहचान को रेखांकित करने का प्रयत्न उन्होंने किया है। निर्मल वर्मा के यात्रा वृत्तातों ने हिन्दी साहित्य में विशिष्ट योगदान दिया।

2.4.4 प्रवासी जीवन में अनुवाद कार्य

निर्मल वर्मा ने एक दशक से अधिक समय यूरोप में बिताया जहाँ उन्होंने कारेल चापेक और मिलान कुंदेरा जैसे आधुनिक चेक लेखकों के हिन्दी में अनुवाद की परियोजना का प्रारंभ किया। निर्मल वर्मा ने चेकोस्लोवाकिया में रहते हुए अनेक प्रसिद्ध कृतियों के अनुवाद किये और लम्बे समय तक वहाँ की रचनाओं का मर्म ग्रहण किया। उनके रचना-कर्म पर प्रागवसन्त की छाया मौजूद है। इन अनुवादों ने साहित्य स्तर पर निर्मल वर्मा के लेखन पर प्रभाव डाला और उनके अनुभव क्षेत्र को विस्तार दिया। वे कहते हैं - "जीवन की आन्तरिक गहाराइयाँ और रहस्य हमारे जीवन को कैसे बदल सकने हैं, यह मैंने कारेल चापेक और उनकी रचना 'ए ऑर्डिनरी लाइफ' से सीखा।"[32]

निर्मल वर्मा से बेहतर अनुवाद शायद ही किसी हिन्दी लेखक ने किये हो। उनके अनुवादों की सर्जनात्मकता में रचना के मूल से कम आनन्द प्राप्त नहीं होता। इसलिए उनके अनुवाद पाठकों केलिए एक अद्‌भुत उपलब्धि हैं। निर्मल वर्मा यूरोपीय भाषा से भारतीय भाषा में अनुवाद करते समय अपना अनुभव यों व्यक्त करते हैं - "अंग्रेज़ी की अपेक्षा हिन्दी चेक भाषा से अधिक मेल खाती है। जो कहानियाँ अंग्रेज़ी में अनुवाद के बाद फीकी-सी लगने लगती हैं वही चेक भाषा में जीवंत हो उठती है। चेक साहित्य का हिन्दी अनुवाद करते हुए मुझे इन दोनों के घनिष्ठ संबंध को जानकर बहुत हैरानी हुई।"[33]

2.4.5 प्रवासी जीवन में साहित्य साधना

निर्मल वर्मा के प्रवासी लेखन में उनके व्यक्तित्व का वह पक्ष उभरकर आया है जो अपनी भारतीय अस्मिता और सोच को जीते हुए भी यूरोप के परिवेश की विशिष्टताओं को समझ सकने में समर्थ हैं। उनकी दृष्टि में वह सूक्ष्मता और उदारता है जो एक भिन्न संस्कृति के संस्कारों को खोज पाती है और उसके औचित्य को पहचान पाती है, आत्मसात कर पाती है। यूरोप के परिवेशगत विविध रंगों को पकडते हुए, उन्हें प्रस्तुत करते हुए निर्मल वर्मा का अपना व्यक्तित्व भी प्रवासी लेखन में प्रतिबिम्बित होता है।

नगर-संरचना के साथ-साथ वहाँ के निवासियों की चरित्रगत विशेषताओं को भी निर्मल वर्मा ने कृतियों में प्रतिपादित किया है। बर्लिन, कोपनहेगन, रिक्याविक, प्राग, वियना, पेरीस की खासियत को उभारने वाली विशेषताओं को उन्होंने बडी सूक्ष्मता से प्रवासी रचनाओं में चित्रित करने का प्रयास किया है। प्रवास से भेजे गये उनके आलेख जो वहाँ की सामाजिक - सांस्कृतिक अवस्था के बारे में थे, नियमित रूप से 'टाइम्स ऑफ इंडिया' के सपादकीय पृष्ठ पर स्थान पाते रहे। उनके यात्रा-वृत्तातों की पुस्तकों में सांस्कृतिक-समीक्षा का स्वरूप प्रकट होता है।

उनके कई उपन्यास और कहानियाँ यूरोप में रहकर रचित हैं। हरिश त्रिवेदी की राय में -"वास्तव में निर्मल वर्मा का पहला उपन्यास और उसकी लघु कथाओं का एक पूरा संग्रह विदेशी रंग रूप में रचा गया। उनकी

पृष्ठभूमि विदेशी थी। यह झलक उनके 'इन सर्च ऑफ द इंग्लिश' जैसे निबन्धों में भी मिलती है। निर्मल पश्चिम को केवल जानते ही नहीं थे अच्छी तरह जानते थे और उसे गहरे तक धंसी भारतीय सोच तथा अहसास के साथ देखते थे।"[34]

निर्मल वर्मा की 'परिन्दें,' 'जलती-झाडी,' 'लन्दन की एक रात,' 'पिछली गर्मियों में', 'बीच बहस में' उनके प्रवासी भारतीय होने के वक्त की रचनाएँ हैं। 'चीड़ों पर चाँदनी', 'हर बारिश में', 'धुंध से उठती धुन' और 'वे दिन' कृतियों को लिखते वक्त निर्मल वर्मा प्राग में प्रवासी थे। ओलेस्या तथा अन्य कहानियाँ - अलेक्सांद्र कुप्रीन, रोमियो जुलियट और आँधेरा - यान ओत्वेनाशेक, 'झोपड़ीवाले तथा अन्य कहानियाँ' - मिहाइल सादोवेन्, 'बाहर और पने'- इर्शी फ्रीड, 'बचपन' लियो टॉलस्टोय, 'आर यु आर', कारेल चापेक आदि अनुवाद जैसी अनेक साहित्य विधाओं का सृजन प्रवासी जीवन में निर्मल वर्मा ने किया।

संवेदनाओं की जितनी बारीक परत निर्मल वर्मा ने काम किया, वह हिन्दी को प्रवासी संवेद्यता की एक अद्‌भुत देन है। प्रवासी साहित्य ने हिन्दी में मनोवैज्ञानिक और सांस्कृतिक द्वन्द्व का अनुभव दिया है। दस साल के चेक प्रवास में निर्मल वर्मा ने अपनी आखों से जो अनुभव किया उन्हीं की प्रस्तुति अपनी रचनाओं में हुई है। 1968 के बाद वे प्राग से चले गए और उन्होंने कुछ समय यूरोप की यात्रा में व्यतीत किया। निर्मल वर्मा ने इस दौरान एक नई भाषा गढ़ ली थी। अपने मौलिक विचारों से मेल खाती और उसकी अभिव्यक्ति में सक्षम। दर असल वह नई भाषा नहीं कल्पनाशील मुहावरेदारी थी।

संक्षेप में विविध राजनीतिक, सामाजिक विषयों पर उनके विचार, साहित्य, संगीत, चित्रकला, प्रकृति के प्रति रुझान, संस्कृति के विभिन्न पहलुओं पर उनकी जिज्ञासा और जागरूकता का परिचय उनके प्रवासी लेखन में सर्वत्र मिलता है। प्रवासी जीवन के दौरान विभिन्न विषयों के प्रति गहरी पहचान निर्मल वर्मा को हुई। अतः कह सकते हैं कि निर्मल वर्मा का रचना-संसार ऐसी जगह खडा है जहाँ से वह वैश्विक और क्षेत्रीय दुनिया को एक साथ साफ-साफ देख सकता है जूझ सकता है । उनका लेखन इन दोनों के सम्मिलन की मिसाल है।

2.5 विभिन्न विचार-धाराओं का प्रभाव

निर्मल वर्मा नयी कहानी के कदाचित् सबसे विवादस्पद कहानीकार हैं। निर्मल वर्मा के कथा-साहित्य में जीवन का व्यापक अनुभव अभिव्यक्त हुआ है, जिस में एक ओर भारतीय परिवेश की अभिव्यक्ति है तो दूसरी ओर विदेशी परिवेश भी पूरी संवेदनशीलता से चित्रित हुआ है। मध्यवर्गोय आकांक्षाओं और मोहभंग उनकी केन्द्रीय रचना-वस्तु है। भारत की समकालीन चिंताधारा को उन्होंने अंग्रेज़ी के माध्यम से भी संसार तक पहूँचाया है। निर्मल वर्मा भारत की स्मृति-परंपरा को नए संदर्भों के साथ जोड़ने वाले गंभीर विचारक हैं।

2.5.1 मार्क्सवाद का प्रभाव

निर्मल वर्मा की कथा-यात्रा मार्क्सवाद से शुरू हुई थी। निर्मल वर्मा कम्युनिस्म को एक ऐसी विचारधारा मानते थे जो मानवीय आदर्शों का सबसे

सुन्दर उदाहरण लेकर हमारे सामने आयी थीं। निर्मल वर्मा की चिन्ताधारा और भावधारा को स्वरूप देने में समाजवाद के आदर्श का, या उसके पीछे के मार्क्सवाद का योगदान रहा है, इसे उन्होंने कभी छिपाया नहीं। विनोद भरद्वाज के साथ हुई एक इन्टरव्यू में वे बाताते हैं - "मार्क्सवाद ने दुनिया के बारे में एक तरह का फ्रेमवर्क मुझे दिया था कि उसमें कोई क्रम (ऑर्डर) है, उसका कोई अर्थ है और उसके भीतर मेरे रहने के भी कोई मायने है। वह मुझे मेरे और दुनिया के बीच में एक अर्थपूर्ण सुसंगत फ्रेमवर्क प्रदान करता था।"[35]

निर्मल वर्मा दिल्ली-जैसे महानगर के एक मध्यवर्गीय परिवार से आये थे और शिमला तथा दिल्ली में उनकी शिक्षा हुई थी। तब के बुद्धिजीवी युवाओं के राजनीतिक रुझान के अनुरूप वे वामपंथी राजनीति से जुड़े थे। छात्रावास के दिनों में ही वे कम्युनिस्ट पार्टी की ओर आकर्षित हुए और उसके कार्ड होल्डर भी रहे। 'समाजवाद का स्वप्न और दुःस्वप्न' नामक निबन्ध में वे लिखते हैं - "समाजवाद के मानवीय स्वप्न से मेरा रिश्ता पुराना रहा है - उतना ही नाजुक, उदास और हसरत भरा। जैसा कि प्रायः शुरु में जवानी के स्वप्न होते हैं। स्कूल के अंतिम वर्षों में, जिस शाम में मार्क्स और लेनिन की पुस्तकें खरीद कर लाया, वह काफी आत्मगौरव का क्षण था यह मुझे याद है।"[36]

सन् 1960 में उनकी सात कहानियों का पहला संग्रह 'परिंदे' प्रकाशित होने तक वे पर्याप्त चर्चित लेखक बन चुके थे। अपने आरंभिक दौर में ही निर्मल वर्मा का, इतनी अधिक चर्चा के केन्द्र में आने का एक कारण यदि

उनकी कहानियों का अपना वैशिष्ट्य था तो दूसरी ओर उनका एक वामपंथी रूझानवाला लेखक माना जाना भी था।

निर्मल वर्मा के रचनाकर्म का एक अंतर्विरोध ही कहा जाएगा कि उनकी उस दौर की कहानियों से कभी नहीं लगा कि ये कहानियाँ किसी मार्क्सवादी की रचनाएँ हैं। वर्ग संघर्ष, शोषण, द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद से वे कोसों दूर थे। 1956 में हंगेरी पर सोवियत यूनियन के हमले के बाद उन्होंने विरोध-स्वरूप कम्युनिस्ट पार्टी की प्राथमिक सदस्यता से इस्तीफा दे दिया था। परन्तु 1968 में चेकोस्लोवाकिया पर रूस के आक्रमण ने उनके विचारों पर गहरा प्रभाव डाला।

मार्क्सवाद अगर उन्हें अपर्याप्त लगने लगा तो इसके पीछे उनकी यह समझ थी कि उसमें मनुष्य की सक्रिय भूमिका केन्द्र में नहीं और वह इतिहास का दास बना दिया गया है। इस संदर्भ में मधुकर उपाध्याय बताते हैं - "निर्मल वर्मा को शायद 'कम्युनिस्ट मेनिफेस्टों' में मार्क्स के इस निष्कर्ष ने निश्चय ही प्रेरित किया होगा कि प्रत्येक की मुक्ति सबकी मुक्ति की अनिवार्य शर्त है।"[37]

2.5.2 अस्तित्ववादी दर्शन पर निर्मल वर्मा की आस्था

अस्तित्ववादी दर्शन का व्यापक प्रभाव निर्मल वर्मा की रचनाओं में देखा जा सकता है। निर्मल वर्मा की रचनाओं पर सार्त्र और कामू के विचारों का प्रबल प्रभाव है। प्रवासी जीवन ने निर्मल वर्मा पर अस्तित्ववादी विचारधारा

का गहरा प्रभाव पैदा किया है। अनेक विदेशी दार्शनिकों और चिन्तकों से आकृष्ट होकर निर्मल वर्मा भी अस्तित्ववादी विचारधारा के रास्ते पर चले। अस्तित्ववादी दर्शन के कारण उनकी रचनाओं में अस्तित्व की तलाश करनेवाले पात्र अधिक दिखायी पडते हैं। निर्मल वर्मा ने विसंगतियों से भरे संसार में अकेले अभिशप्त जीते मनुष्य का चित्रण किया है।

आधुनिक जीवन संदर्भों से उत्पन्न घुटन, घृणा, पीड़ा, संत्रास, अकेलापन, अजनबीपन, परायापन, मृत्युबोध, शून्यता बोध, तटस्थता, बेगानापन, क्षणबोध आदि अनेकानेक विसंगतियों से प्रवासी जीवन ने निर्मल वर्मा को परिचित कराया। सुधीश पचौरी के शब्दों में - "निर्मल पश्चिम के बहुचर्चित अस्तित्ववादी अलगाव को भारतीय-प्रतिति बना देते है और पश्चिम में आत्म ज्ञान के अलगाव को भारतीय आत्म-भाव के अलगाव की ओर लाते हैं।"[38]

एक विचारधारा के स्तर पर काम्यू के अस्तित्ववाद का गहरा असर निर्मल वर्मा के रचना-संसार में हम निश्चय ही देख सकते हैं। उनका कहना है -"अस्तित्ववादी दर्शन से जो मैंने सबसे बहुमूल्य चीज़ अपने लिए पाई कि ईश्वर और इतिहास से मुक्त होकर, यह आदमी पर निर्भर है कि वह अर्थ और नैतिकता को जन्म दे जिससे कि बाहरी दुनिया से एक अर्थपूर्ण संबंध बन सके।... लेकिन क्योंकि मेरी भूमिका मार्क्सवाद से शुरु हुई थी इसलिए बाद में अस्तित्ववाद के प्रति इतना गहरे स्तर पर आकर्षित होना अपने विकास में मुझे एक अनिवार्य कदम जान पडा।"[39] स्वयं विदेशों में रहने के कारण निर्मल वर्मा की कहानियों में विदेशी परिवेश से जुडे पात्रों की भरमार है। अस्तित्ववादी

विचारधारा से प्रभावित निर्मल वर्मा ने अपनी अधिकांश रचनाओं में पुराने नैतिक मूल्यों को नकारकर रख दिया है।

निर्मल वर्मा के 'वे दिन' और 'अन्तिम अरण्य' प्रमुखतः अस्तित्ववादी उपन्यास हैं। उनके तीनों कहानी संग्रह 'परिन्दे', 'जलतीझाडी' और 'पिछली गर्मियों में' की अधिकांश कहानियाँ जीवन के प्रति उदासीन भाव, हताशा, अलगाव और आत्मपरकता आदि अस्तित्ववादी अनुभूतियों को गहराती है। निर्मल वर्मा को मार्क्सवाद ने संसार-ज्ञान के बारे में एक फ्रेमवर्क दिया है तो अस्तित्ववादी चिन्तन ने एक नया जीवन दर्शन।

2.5.3 चिंतन की मौलिकता

निर्मल वर्मा का चिंतन एक कलाकार लेखक का चिंतन है, किसी दार्शनिक का नहीं। इसलिए इस चिंतन की एक मौलिक विशेषता यह है कि वह कलागत रूप के सवाल को संस्कृति के सवाल की हैसियत में ला देते हैं और संस्कृति की चर्चा भी केवल सैद्धान्तिक अमूर्त स्तर पर नहीं, बल्कि समकालीन परिस्थिति के ठोस संदर्भ में करते हैं। उनकी मूल चिन्ता अपनी जातीय अस्मिता और संस्कृति की जड़ों को पहचानने की है। सबसे बडी बात यह है कि उनमें पश्चिम की तार्किक अन्तर्दृष्टि और पूर्व (भारतीय) के आत्मबोध का अद्‌भुत सामंजस्य है। एक ओर पश्चिम की तार्किक अन्तर्दृष्टि के आलोक में वे भारतीय संस्कृति की मिथकीय चेतना तथा दार्शनिक-धार्मिक प्रत्ययों एवं प्रतीकों को परखने की कोशिश करते हैं तो दूसरी ओर भारत की गैर तार्किक अन्तश्चेतना के आधार पर वे यूरोप की तर्कशील वैज्ञानिक सभ्यता

के अन्तर्विरोधों को भी उजागर करते हैं। निर्मल वर्मा की मान्यता है कि भारत और यूरोप की प्रतिश्रुति के क्षेत्र अलग-अलग हैं।

निर्मल वर्मा के चिन्तन के केन्द्र में मनुष्य है। वे मनुष्य को प्रकृति और ईश्वर के साथ रखकर देखते हैं इसलिए उनके चिंतन के सूत्र संश्लिष्ट हैं। भाषा, साहित्य, कला, धर्म, इतिहास, अध्यात्म, ईश्वर, प्रकृति ये शब्द निर्मल वर्मा केलिए एक दूसरे से विच्छिन्न नहीं हैं। एक की सार-सत्ता दूसरे पर निर्भर है। निर्मल वर्मा के शब्दों में - "वह शब्द के भीतर ईश्वर की खटखटाहट है, वह कितनी ही सत्तावान क्यों न हो, साहित्य नहीं होता।"[40]

2.5.4 धर्म की अवधारणा

निर्मल वर्मा की दृष्टि में 'धर्म' की भारतीय अवधारणा कविता और कला के बहुत निकट है। इस संबंध में निर्मल वर्मा कहते हैं - "कविता और कला की तरह धर्म मनुष्य की एक ऐसी अदम्य और आदिम लालसा से उदभूत होता है, जिसका लक्ष्य उन सब सीमाओं के परे जाना है, जो मनुष्य को किसी एक लगी-बँधी अवधारणा में बाँधने का प्रयास करती है।"[41] निर्मल वर्मा धर्म की पश्चिमी अवधारणा से भारतीय धर्म चेतना को अलग करते हैं। पश्चिम में धर्म व्यक्ति के उन मताग्रहों का पुंज है जिनको वैधता चर्च और बाइबिल से प्राप्त होती है। भारत में धर्म शताब्दियों के अनुभवों से निचोड़ा हुआ आत्मबोध है। पश्चिम के प्रभाव में हमने अपने को धर्म निरपेक्ष घोषित कर दिया।

2.5.5 सांस्कृतिक विवेचन में अंतर्दृष्टि

निर्मल वर्मा का रचना कर्म सांस्कृतिक प्रश्नों से गंभीरता से जूझता है। संस्कृति उनकी रचनाओं में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। इसलिए उनका चिंतनपरक साहित्य ज़्यादा मारक और प्रखर है। भारतीय और पाश्चात्य संस्कृतियों को आमने-सामने रखते हुए निर्मल वर्मा उनकी परत-दर-परत खोलते चलते हैं। वे भौतिकवादी और गैर भैतिकवादी के स्थूल विभाजन में विश्वास नहीं रखते।

निर्मल वर्मा अपने सांस्कृतिक विवेचन में अतंर्दृष्टि और अंतरात्मा पर बहुत बल देते हैं। वे इसी अंतर्दृष्टि को भारतीय जीवन मूल्य का अनिवार्य तत्व मानते हैं जो आज भी भारतीय जनमानस में संचरित हो रहा है। निर्मल वर्मा मनुष्य के आत्मबल को उसके होने की सबसे बडी प्रामाणिकता मानते हैं। उनका मानना है कि दृश्य शक्तियों के साथ-साथ कुछ अदृश्य और रहस्यात्मक शक्तियाँ भी हमारे जीवन को प्रभावित करती हैं।

निर्मल वर्मा एक बहुपठित विचारक हैं। उनके लेखों में पाठक अनेक भारतीय लेखकों एवं मनीषियों जैसे व्यास, वाल्मीकि, तुलसी, कबीर, बंकिम, अरविन्द, कुमारस्वामी, विवेकानन्द, रामकृष्ण परमहंस, टैगोर, अज्ञेय आदि के कथनों और उक्तियों से गुज़रता है। अपनी विशिष्ट जीवन दृष्टि एवं चिंतन-पद्धति के कारण निर्मल वर्मा विवाद के घेरे में भी रहे हैं।

निर्मल वर्मा ऐसे रचनाकार हैं जिनकी चिंता संस्कृति, कला, स्वतंत्रता, इतिहास और स्मृति तथा सच आदि के प्रश्नों में परंपरागत दृष्टि से नितांत भिन्न

है। निर्मल वर्मा की चिंता गहरे अर्थ में वर्तमान से जुड़कर अनेकमुखी और वैश्विक हो जाती है। भावना और चिंतनशीलता का यह उलझाव बहुत ही कम रचनाकारों में पाया जाता है। डॉ. प्रेमसिंह चिंतक निर्मल वर्मा के बारे में कहते हैं - "निर्मल वर्मा हमारे समय के महत्वपूर्ण कथाकार और चिंतक हैं। उनका चिंतन एक रचनात्मक मस्तिष्क द्वारा प्रस्तुत चिंतन का बेहतरीन नमूना है। कला, जीवन, समाज, संस्कृति से जुड़े महत्वपूर्ण और ज़रूरी मुद्दों और सवालों को उन्होंने उठाया है और समुचित गहराई से अपना विश्लेषण प्रस्तुत करते हुए निष्कर्षों की मंज़िल तय की है।"[42]

कहना न होगा कि निर्मल वर्मा आधुनिक काल के उन कुछ गिने चुने रचनाकारों से है जिनकी दृष्टि कभी कमज़ोर नहीं हुई और न ही उन्होंने अपनी आँखों पर इस समाज और संस्कृति को देखने के लिए कोई चश्मा लगाया। अपनी स्वतंत्र मेधा में भरोसा रखते हुए उन्होंने सत्ता के छल, संस्कृतियों के संकट और व्यक्ति की यातना को स्वर प्रदान किया है।

2.6 निर्मल वर्मा की साहित्यिक अवधारणाएँ

बीसवीं शताब्दी के वैचारिक उतार चढावों को पारदर्शी दृष्टि से अंकित करने वाले लेखक थे निर्मल वर्मा। निर्मल वर्मा स्वातंत्र्योत्तर भारतीय साहित्य में अपनी तरह का अकेला और अनूठा सांस्कृतिक हस्तक्षेप रहे हैं। निर्मल वर्मा की साहित्यिक अवधारणाओं को उनके समीक्षात्मक ग्रथों, निबंध-संग्रहों, अनेक पत्र-पत्रिकाओं में उनके लिखे लेख तथा वक्तव्य, यात्रा-वर्णन आदि के अतिरिक्त उनकी अनेक रचनाओं की भूमिकाओं में देखा जा सकता है।

निर्मल वर्मा की साहित्य संबंधी अवधारणा यह है- " साहित्य वह 'घर' है - बिना दीवारों का घर -जहाँ वह पहली बार अपने 'मनुष्यत्व' से साक्षात्कार करता है। यह सत्य का अनुभव नहीं, सुख का नहीं। यदि हमें सुख की सुरक्षा चाहिए, तो हमें साहित्य के पास नहीं जाना चाहिए, घर शब्द से जो सुरक्षा की सुगंध आती है, वह साहित्य में नहीं है।"[43]

2.6.1 साहित्यकार का उद्देश्य

निर्मल वर्मा कहते हैं कि - "लेखक को चाहिए कि वह अपने आसपास जो अंधेरा है उसे सही शब्द दे, ताकि उस शब्द के द्वारा वह उन परिस्थितियों को एक विशिष्ट अर्थ दे सके, जो हर व्यक्ति के जीवन अनुभवों में ध्वनित होता है, ताकि लेखक और पाठक के बीच की दीवार ढह जाए।"[44] निर्मल वर्मा लेखक का दर्शन संबंधी विचार यों व्यक्त करते हैं - "लेखक का दर्शन सोच के विषय में नहीं, बल्कि स्वयं सोच की प्रक्रिया और उसके व्यवहार में निहित होता है।" [45] निर्मल वर्मा साहित्य में यथार्थ का महत्व स्पष्ट करते हुए कहते हैं - "एक लेखक के लिए यह बहुत जरूरी है कि वह यथार्थ के पीछे जो सत्य है, ऊपर से दिखने वाले भ्रमों के पिछे जो यथार्थ है, उसकी परतों को खोल सके।"[46]

2.6.2 साहित्य की प्रतिबद्धता संबंधी धारणाएँ

निर्मल वर्मा प्रामाणिकता और वास्तविकता के प्रति अधिक सचेत दिखाई देते हैं। परन्तु उनके साहित्य की प्रतिबद्धता और सर्जन, विचार और

कृति के बीच उनके स्पष्ट संबंधों को अलगाने वाली कोई सीधी रेखा खींच सकना बहुत कठिन है। प्रतिबद्धता के प्रश्न पर निर्मल वर्मा साहित्यकार रॉब्ब ग्रिये के विचार से सहमत लगते हैं। निर्मल वर्मा का कथन है कि- "लेखक एक नागरिक की हैसियत से प्रतिबद्ध हो सकता है, लेकिन यह ज़रूरी नहीं है कि एक कलाकार की हैसियत से भी अपने को प्रतिबद्ध महसूस करें।"[47]

2.6.3 साहित्य और राजनीति संबंधी धारणाएँ

साहित्य के संबंध में निर्मल वर्मा का कथन है कि - "सत्ता द्वारा प्रचलित साहित्य कभी पूर्ण रूप से विश्वसनीय नहीं हो सकता।"[48] निर्मल वर्मा राजनीति और साहित्य का घनिष्ठ संबंध मानते हुए भी यह स्वीकार करते हैं कि साहित्य को राजनीति से प्रभावित नहीं होना चाहिए, बल्कि उससे स्वतंत्र और मुक्त होना चाहिए। क्योंकि ऐसा साहित्य लेखक के अनुसार साहित्य का मात्र भ्रम देता है। वह वास्तव में साहित्य नहीं होता। उनके अनुसार राजनीति को साहित्य पर इतना हावी नहीं होना चाहिए कि साहित्यकार उसका विरोध तक करना शुरू कर दे।

निर्मल वर्मा के लिए राजनीति हमेशा किसी संस्कृति की सभ्यतामूलक व्यावहारिक रूप होती है। वे साहित्य को राजनीति से अलग रखने की बात पर बल देते हुए कहते हैं - "कोई भी राजतंत्र चाहे वह कितना ही क्रांतिकारी, मानव-कल्याण के आदर्शों से ओत-प्रोत क्यों न हो - जब तक मेरे संस्कारगत बिम्बों, मेरे जीने की शर्तों को स्वयं परिभाषित करने लगता है, मैं जो हूँ,

उसकी अवहेलना करके मुझे क्या होना चाहिए, इसे आंकने की ज़िम्मेदारी अपने पर ओढ़ता है वहीं से मेरे विरोध की सार्थकता शुरू होती है।"[49]

2.6.4 साहित्य-समाज-संस्कृति संबंधी धारणाएँ

साहित्य को निर्मल वर्मा समाज और संस्कृति से जुडा हुआ मानते हैं। संस्कृति क्या है? इस संदर्भ में उन्होंने कहा है- "संस्कृति मनुष्य की आत्मचेतना का प्रदर्शन नहीं, उस सामूहिक मनीषा की उत्पत्ति है, जो व्यक्ति को एक स्तर पर दूसरे व्यक्ति से और दूसरे स्तर विश्व से जोडती है।"[50] निर्मल वर्मा संस्कृति में सांर्वभौमिकता की बात करते हैं। निर्मल वर्मा के अनुसार संस्कृति के माध्यम से व्यक्ति अपने को पहचानता है। साथ ही इसके द्वारा बाहर की दुनिया को परख भी सकता है। इस प्रकार संस्कृति और समाज से मनुष्य के भविष्य का निर्माण हुआ है। साहित्य के संबंघ में निर्मल वर्मा का कथन है कि - "साहित्य हमें पानी नहीं देता, वह सिर्फ हमें अपनी प्यास का बोघ कराता है।"[51]

2.6.5 कविता- सम्बन्धी धारणाएँ

निर्मल वर्मा ने यद्यपि कविता नहीं लिखी है फिर भी कविता के विषय में उन्होंने अपना विचार प्रकट किया है। "कविता में अकेला एक शब्द महज अपने सघनत्व और अप्रत्याशित रूप से प्रकट होने की प्रक्रिया में, एक अनोखा अर्थ दे सकता है अपने आसपास के शब्द को फोड आकाश की तरफ एक मीनार की तरफ उठता हुआ।"[52] यानी कविता में समय का बडा महत्व है।

कविता में एक शब्द दूसरे शब्द से जुडता है, एक का अर्थ दूसरे में खुलता है। नयी कविता आलोचनात्मक कविता है। नयी कविता स्वयं अपने को नये संदर्भ में परिभाषित करने की कोशिश है। उस कविता में पिछले काफी वर्षों का संघर्ष शामिल है। अतः आज की कविता के पीछे आत्म-परीक्षण और संघर्ष की सशक्त पीठिका शामिल है।

2.6.6 नाटक संबंधी धारणाएँ

निर्मल वर्मा के अनुसार नाटक जीने की सक्रिय कला है। वे कहते हैं - "नाटकीयता हर कला-विधा में मौजूद रहती है, किन्तु हर विधा नाटक नहीं होती।"[53] आज का यथार्थ जीवन नाटक है सिर्फ उसे समकालीन दृष्टि से पहचानने की आवश्यकता है । यानी हकीकत ही नाटक है। निर्मल वर्मा का कथन है कि - "नाटक मंच पर खेलने की चीज़ नहीं, वह जीने की सक्रिय कला है, हर परिचित, पुरानी चीज़ को नये सिरे से छूने की अपेक्षा है, ताकि हम उसे आज का, इस क्षण का धड़कता सत्य देख सकें।"[54] नाटक द्वारा दुनिया के अनेक प्रकार के कारोबार को दर्शाया जा सकता है। वे कहते हैं- "नाटक एक बहुत सफल कोमडी है, जिसके हर वाक्य पर दर्शक हँसते हैं, क्योंकि लगभग हर दर्शक ने इन वाक्यों का सामना दफ्तरों, कचहरियों और कारखानों में किया है।"[55]

2.6.7 उपन्यास संबंधी धारणाएँ

निर्मल वर्मा के अनुसार समयबोध और इतिहास से ही उपन्यास बनता है। समय और इतिहास बोध सामाजिक यथार्थ के विश्लेषण का महत्वपूर्ण

तत्व है। निर्मल वर्मा उपन्यास को एक महत्वापूर्म विधा मानते हैं - "उपन्यास वास्तव में एक विस्तृत कहानी है, जो अपना रस अनेक स्रोतों से ग्रहण करता है- समय, जिंदगी और मृत्यु, इतिहास और स्मृति, दर्शन।"[56] उपन्यास में किस चीज़ की आवश्यकता है इस पर भी निर्मल वर्मा ने अपना विचार प्रकट किया है। आज के उपन्यास में ऐसी ज़मीन की तलाश करनी चाहिए जहाँ इतिहास, मिथक, समय और स्मृति का सम्मिलन हो।

निर्मल वर्मा उपन्यासकार के प्राथमिक उद्देश्य पर ऐसा विचार प्रकट करते हैं - "उपन्यासकार का प्राथमिक उद्देश्य जीवन्त, स्पन्दनशील पात्रों की सृष्टि करना है, किन्तु यह उसका केवल 'प्राथमिक उद्देश्य' है, सम्पूर्ण उपलब्धि नहीं । किन्तु एक महान लेखक इससे आगे जाता है - यथार्थ के प्रति एक गहन संवेदना तथा निर्वैयक्तिक और निरपेक्ष दृष्टिकोण की प्राप्ति के लिए अपने पूर्वाग्रहों से जूझता है; आत्म-संघर्ष के इस ऊँचे स्तर पर ही वह सही अर्थों में सृष्टा बन पाता है - कला की यह सम्पूर्ण उपलबधि है।"[57]

2.6.8 कहानी संबंधी धारणाएँ

निर्मल वर्मा के अनुसार - "अच्छी कहानी वह होती है, जो साहसा कुछ उद्घाटित कर दे...हमें लगे यह कहानी नहीं, कोई इहलाम है।"[58] उनका मानना है कि अच्छी कहानी किसी भी भाषा में क्यों न लिखी गई हो, उसकी खूबी अपने-आप सामने आती है, उसकी खूबी को प्रदर्शित करने के लिए किसी प्रकार की आवश्यकता नहीं। निर्मल वर्मा कहानी को परंपरा से मुक्त कराना चाहते हैं। परंपरा से मुक्त होकर निर्मल वर्मा व्यक्ति मन की

समस्याओं को आत्मा के डिटेक्टिव के रूप में परखते हैं। अर्थात् निर्मल वर्मा कहानीकार को एक खोजकर्ता मानते हैं।

कहानी में यथार्थ-बोध का महत्व क्या है इस संदर्भ में निर्मल वर्मा का कहना है कि- "हर कहानी और कहानी की हर पंक्ति अपने में यथार्थ की विटनेस है। इसलिए उससे अलग है। कोई भी कहानी इस अर्थ में यथार्थवादी नहीं होती, हो ही नहीं सकती।"[59] निर्मल वर्मा कहानियों में कथावस्तु पर ज़ोर नहीं देते हैं। वे कहते हैं - "मेरे लिए कहानी में रिश्तों का पैटर्न केंद्रीय महत्व का है। यदि उससे प्लॉट बनने लगता है, तो मैं उसे छोड़ता या बिगाड़ता नहीं। किंतु यदि वह पैटर्न किसी की बैसाखी के बिना भी उद्घाटित होने लगता है, तो मुझे बुरा नहीं लगता।"[60]

2.6.9 अस्तित्ववादी दृष्टिकोण

अस्तित्ववादी प्रभाव को निर्मल वर्मा ने स्वयं अपने लेखन में स्वीकार किया है। उनका कथन है कि- "अस्तित्ववादी चिंतन में पहली बार मुझे महसूस हुआ कि इतिहास को हम जैसे एक क्रमबद्ध विकास के रूप में स्वीकार करते हैं, वह हकीकत नहीं है। दुनिया उतने क्रमबद्ध रूप में विकसित नहीं होती उसके बिल्कुल उल्टे हम एक अराजकता और अर्थ हीनता की सृष्टि में रहते हैं।"[61] उनका मानना है कि अस्तित्ववादी विचारधारा आज के युग को प्रभावित करनेवाली प्रमुख विचार धारा है। निर्मल वर्मा की कहानियों में अस्तित्ववाद का प्रभाव रहा है। निर्मल वर्मा की संवेदना अस्तित्ववादी परिवेश में मंडराती रहती है।

2.6.10 भाषा संबंधी धारणाएँ

निर्मल वर्मा का कहना है कि भाषा की सही सम्प्रेषणीयता दूसरे तक अपना प्रामाणिक अनुभव पहुँचाती है। निर्मल वर्मा कहते हैं - "बिना शब्द के साहित्य की परिकल्पना असंभव है- इस दृष्टि से वह अन्य कलाओं से इतना भिन्न है। भाषा का सामाजिक पहलू उसके संप्रेषण में है, वहाँ वह एक माध्यम के रूप में प्रयुक्त होती है।"[62] निर्मल वर्मा मौन को भी भाषा स्वीकारते हैं। भाषा के ध्वस्त को लेकर भी वे काफी चिंतित थे। उनके अनुसार इस ओर बहुत कम लोगों का ध्यान गया है।

निर्मल वर्मा ने भाषा, कथ्य और संवेदना के स्तर पर हिन्दी गद्य में काफी तोड़-फोड़ की थी। उनकी भाषा हिन्दी साहित्य में अलग पहचान रखती है। सुशील सिद्धार्थ से हुई बातचीत में वे कहते हैं - " मैं भाषा में संकेतों से काम लेता हूँ, ऐसा मैं समझता हूँ। शब्द बाहुल्य से किसी रचना की शक्ति कम होती है, ऐसा मेरा विश्वास है।"[63] कलाकृति की भाषा के संबंध में निर्मल वर्मा कहते हैं - "कलाकृति का विशिष्ट सत्य उसकी भाषा में ही गुंफित रहता है, उसके बाहर नहीं।"[64]

2.6.11 आधुनिकता संबंधी धारणाएँ

आधुनिकता संबंधी निर्मल वर्मा की अवधारणा है कि - "आधुनिकता, यदि वह महज दिखावा नहीं है, तो वह सब भ्रांतियों से मुक्त होकर सिर्फ अपने सत्य की खोज का दूसरा रूप है।"[65] आधुनिकता में भारतीयता या अभारतीयता

की खोज व्यर्थ का काम है। उनका कहना है आधुनिकता सिर्फ अपनी खोज में सत्य को ही महत्ता देती है। निर्मल वर्मा के अनुसार आधुनिक होने के लिए देखना-परखना ही काफी नहीं है, बल्कि उसके लिए एक बिलकुल नये सिरे से जीना ज़रूरी है।

निर्मल वर्मा ने भारतीयता और आधुनिकता में कोई अंतर्विरोध न मानकर दोनों को एक दूसरे के समकक्ष माना है। उनका मानना है कि जो सब दकियानूसी विरोधों को सहकर 'भारतीयता' का अतिक्रमण करने का साहस दिखा सकता है वही है आधुनिक। निर्मल वर्मा के अनुसार साहसपूर्वक संघर्ष करना सही अर्थों में आधुनिकता है। यही संघर्ष, उनके कथा-साहित्य को आधुनिकता की परिभाषा देता है। आधुनिकता के स्वरूप के संदर्भ में निर्मल वर्मा अपनी राय यों व्यक्त करते हैं - "आधुनिकता के जिन तीन प्रतीकों को हमने स्वतंत्रता के बाद ज्यो-का-त्यों अपना लिया, वे थे - समाजवाद, औद्योगीकरण और धर्मनिरपेक्षता।"[66]

निष्कर्ष

निर्मल वर्मा अपने समय के बडे चिंतक, विचारक और कथाशिल्पी रहे थे। निर्मल वर्मा को एक अग्रणी साहित्यकार बनने की प्रेरणा अपने पारिवारिक वातावरण से प्राप्त हुई थी। विशेषतः अपने बडे भाई प्रसिद्ध चित्रकार रामकुमार से। स्कूल के दिनों से ही उन्होंने कहानियाँ लिखनी शुरू कीं। विद्यार्थी जीवन में प्रेमचन्द, अज्ञेय, रवीन्द्रनाथ ठाकुर, शरतबाबू और जैनेद्र की कहानियों का गहरा असर निर्मल वर्मा पर पड़ा। प्रवासी जीवन ने निर्मल वर्मा

पर अस्तित्ववादी विचारधारा का गहरा प्रभाव पैदा किया है। प्रवास काल में निर्मल वर्मा को अनेक पाश्चात्य लेखकों की कृतियों को करीब से देखने का अवसर मिला और इन पाश्चात्य लेखकों के प्रभाव ने निर्मल वर्मा को रचनात्मक आयाम देने में महत्वपूर्ण भूमिका आदा की है।

निर्मल वर्मा ने भारत से पश्चिम की और पश्चिम से भारत की एक बहुत ही समृद्ध सांस्कृतिक मंच पर मुलाकात कराई। वे एक ऐसे कथाकार रहे थे जिनकी रचना-प्रक्रिया में चिंतन और संवेदना का अचूक रसायन है। उन्होंने अपनी कहानियों में आज़ादी के बाद का बदला परिवेश प्रस्तुत किया है। मध्यवर्गिय पढ़े-लिखे युवागणों का नया समाज, नव अंकुरित आज़ादी का एहसास, अवसाद और उमंग को स्वर प्रदान करने वाली ज़िदगी का यथार्थ चित्रण भी निर्मल वर्मा ने प्रस्तुत किया है।

संक्षेप में निर्मल वर्मा ने अपने रचनात्मक लेखन में आधुनिकता को अपने चिंतन और चिंता का केद्रीय विषय बनाया। इन्होंने हिन्दी गद्य साहित्य को आधुनिक परिवेश के अनुरूप समृद्ध बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की है।

संदर्भ

1. निर्मल वर्मा : मेरे साक्षात्कार, पृ. 54
2. लक्ष्मीमल्ल सिंधवी : साहित्य अमृत, अप्रैल 2006, पृ. 9
3. गगनगिल (संपा) : प्रिय राम, पृ. 77
4. निर्मल वर्मा : मेरे साक्षात्कार, पृ. 49
5. अशोक वाजपेयी (संपा) : पूर्वग्रह, जुलाई-अक्तूबर 1978, पृ. 7
6. गगन गिल : संसार में निर्मल वर्मा, पृ. 163

7. निर्मल वर्मा : मेरे सक्षात्कार, पृ. 9
8. धर्मयुग, 30 अप्रैल 1989, पृ. 21
9. गगन गिल : प्रियराम, पृ. 160
10. गगन गिल : संसार में निर्मल वर्मा, पृ. 104
11 निर्मल वर्मा : मेरे साक्षात्कार, पृ. 53
12. वही, पृ. 11
13. निर्मल वर्मा : शताब्दी के ढलते वर्षों में , पृ. 109
14. निर्मल वर्मा : शब्द और स्मृति, पृ. 10
15. निर्मल वर्मा : आदि, अन्त और आरंभ , पृ. 11
16. वही , पृ. 12
17. निर्मल वर्मा : ढलान से उतरते हुए, पृ. 79
18. निर्मल वर्मा : आदि, अन्त और आरंभ , पृ.16
19. वंदना केंगरानी : निर्मल वर्मा के स्त्री विमर्श, पृ. 69
20 निर्मल वर्मा : ढलान से उतरते हुए , पृ. 7
21. निर्मल वर्मा : शताब्दी के ढलते वर्षों में , पृ. 81
22. निर्मल वर्मा : ढलान से उतरते हुए , पृ. 157
23. निर्मल वर्मा : आदि, अन्त और आरंभ , पृ. 28
24. निर्मल वर्मा : ढलान से उतरते हुए , पृ. 119
25. गगन गिल : संसार में निर्मल वर्मा, पृ. 142
26 निर्मल वर्मा : मेरे साक्षात्कार, पृ. 12
27 वही, पृ. 28
28 वही, पृ. 29
29. वही, पृ. 18

30 निर्मल वर्मा : चीडों पर चाँदनी, पृ. 32

31 वही, पृ. 7

32. गगन गिल (संपा)ः संसार में निर्मल वर्मा, पृ. 143

33. वही , पृ. 22

34. मधुकर उपाध्याय (संपा) : निर्मल माया, पृ. 242

35. निर्मल वर्मा : दूसरे शब्दों में, पृ. 99

36. वही, पृ. 178

37. मधुकर उपाध्याय (संपा) : निर्मल माया, पृ. 41

38. नन्दकिशोर आचार्य : अवलोकन-निर्मल वर्मा, पृ. 122

39. निर्मल वर्मा : दूसरे शब्दों में, पृ. 179

40. वही, पृ. 19

41. वही, पृ. 89

42. डॉ. प्रेमसिहं : निर्मल वर्मा : सृजन और चितंन, पृ. 131

43. निर्मल वर्मा : दूसरे शब्दों में, पृ. 12

44. निर्मल वर्मा : शब्द और स्मृति, पृ. 28

45. निर्मल वर्मा : सर्जना पथ के सहयात्री - पृ. 42

46. निर्मल वर्मा : मेरे साक्षात्कार, पृ. 39

47. निर्मल वर्मा : हर बारिश में , पृ. 85

48. निर्मल वर्मा : शब्द और स्मृति, पृ. 43

49. वही, पृ. 64

50. वही, पृ. 63

51. निर्मल वर्मा : दूसरी दुनिया, पृ. 269

52. निर्मल वर्मा : शब्द और स्मृति, पृ. 49

53. निर्मल वर्मा : तीन एकांत, पृ.12

54. निर्मल वर्मा : चीडों पर चाँदनी, पृ. 11

55. निर्मल वर्मा : हर बारिश में , पृ. 15

56. निर्मल वर्मा : मेरे साक्षात्कार, पृ. 98

57. निर्मल वर्मा : सर्जना पथ के सहयात्री, पृ. 63

58. निर्मल वर्मा : मेरे साक्षात्कार, पृ. 90

59. निर्मल वर्मा : हर बारिश में , पृ. 102

60. निर्मल वर्मा : मेरे साक्षात्कार, पृ. 32

61. सारिका, जून 1978, पृ. 7

62 निर्मल वर्मा : दूसरे शब्दों में, पृ. 14

63. गगन गिल (सपां) : संसार में निर्मल वर्मा, पृ. 109

64. निर्मल वर्मा : शताब्दी के ढलते वर्षों में, पृ. 49

65. निर्मल वर्मा : हर बारिश में, पृ. 9

66. निर्मल वर्मा : मेरे साक्षात्कार, पृ. 117